बलिवेदी पर

लेखक

श्री विद्याभास्कर शुक्ल

प्रकाशक

श्री हर्षवर्द्धन शुक्ल

सरस्वती सदन

दारागंज, प्रयाग

प्रथमबार]

विषय-सूची

बलिवेदी पर

रक्त का टीका

(१)

उसका नाम था गयरी। वह अपने साथियों में क्रीड़ा कर रहा था। क्रीड़ा में उसके बढ़ते हुये साहस को देखकर उसके एक साथी ने ताने के स्वर में कहा—गयरी! तू अपने को बड़े साहस और बड़ी शक्तिवाला तो लगाता है; पर पहिले अपने पिता का नाम तो बता!

बालक का मुँह उतर गया। उसकी आकृति पर उदासी के भाव नाचने लगे। हृदय अपमान और वेदना से मथ उठा। इसका कारण यही था कि वह अपने बाप के नाम को नहीं जानता था! यही नहीं, वल्लभीपुर के अधिकांश नर-नारी भी उसके पिता से प्रायः अनभिज्ञ ही थे। इसी से लोग अवसर पा कर गयरी से, उसके बाप के सम्बन्ध में पूछा करते थे। लोगों को सन्देह था कि गयरी का पिता, किसी दूसरी जाति का होगा, इसी से उसकी माँ लोगों से अपने पति के नाम को छिपाया करती है! पर गयरी को, लोगों की इस अपमानकारी भावना का क्या पता था! वह अपनी माँ-सुभगा से अनेकों बार अपने पिता

के सम्बन्ध में पूछ चुका था, इसलिये नहीं, कि लोग उसका अपमान करते हैं, बल्कि इसलिये कि जब वह अपने साथियों को 'पिता' और 'बाबा' कह कर पुकारते सुनता तो उसे भी किसी को 'पिता' और 'बाबा' कह कर पुकारने की अभिलाषा हुआ करती थी !

किन्तु उस दिन उसका हृदय अपमान से मथ उठा। उसे अपने साथी का वह असामयिक ताना ज़हर से भी कड़ुवा प्रतीत हुआ। वह हृदय में असीम वेदना का भार लेकर सुभगा के पास पहुँचा। और उसके अंचल का कोना पकड़कर पूछने लगा:—माँ ! बताओ, मेरे पिता का क्या नाम है ? वह कौन हैं और कहाँ रहते हैं। यदि तुम न बताओगी तो आज इसी स्थान पर तेरी आँखों के सामने ही अपने इस शरीर का विध्वंस कर डालूँगा।

बालक की प्रतिज्ञा अटल थी ! वह पिता का नाम न बताने पर बिलकुल मरने मारने के लिये तैयार था। सुभगा का अब कोई बहाना काम न कर सका। उसने अपनी मंत्र-शक्ति से सूर्य-देव को प्रगट कर कहा :—बेटा ! यही तुम्हारे पिता है। तुम इनको हाथ जोड़कर प्रणाम करो।

बालक प्रसन्न हो उठा। सूर्यदेव आशीर्वाद स्वरूप उसे एक विजयी शिलाखण्ड देकर अन्तर्ध्यान हो गये। शिलाखण्ड हाथ में देते हुये उन्होंने गर्व से कहा—इस शिलाखण्ड से तुम जिसका शरीर छू दोगे वह उसी समय मर जायगा।

(२)

बल्लभीपुर के सिर पर गयरी का आतंक छा गया! कुछ दिनों पहले जिस गयरी का लोग उपहास किया करते थे, जिसे जली-कटी बातें सुनाकर अपने हृदय में आनन्द का अनुभव सा किया करते थे, अब उसी को सामने देखकर लोग डरने लगे। उसके नाम को ही सुनकर काँपने लगे! यह सब उसी शिला-खण्ड का प्रभाव था। गयरी ने, उसके द्वारा थोड़े ही दिनों में अपने समस्त शत्रुओं का नाश-सा कर दिया। उसके इस प्रबल पराक्रम को बढ़ते हुये देखकर बल्लभीपुर का राजा डरा उसने गयरी को अपने पास बुलाकर कहा:—देखो! यदि तुम अपना कुशल चाहते हो तो शिलाखण्ड मुझे दे दो! पर गयरी कब इसे स्वीकार करनेवाला था! उसने एक दिन अवसर पाकर बल्ल-भीपुर के ऊपर अपना राज्याधिकार स्थापित कर लिया और शिलादित्य के नाम से चारों ओर अपनी विजय का डंका बजा दिया!

अब वह गयरी नहीं, जिसका लोग उपहास किया करते थे, अब तो वह बल्लभीपुर का सम्राट् है। उसके चरणों की धूलि को बड़े बड़े वीर तक पूजा करते हैं, बड़े बड़े दिग्गज उसके क़दमों का बोसा लेने में अपना गौरव समझते हैं। उसने अपनी आँखों के केवल संकेतमात्र पर ही बड़े बड़े पराक्रमी शत्रुओं की सारी मान-मर्यादा धूल में मिला दी। जब तक उसके हाथ में सूर्यदेव का वह शिलाखण्ड है तब तक किसमें साहस है कि वह उसमें

सामने आवे! चारों ओर उसके नाम का डंका बज गया। उसका प्रबल प्रभुत्त्व सबके शिर पर नाचने लगा पर शिलादित्य को इतने ही से सन्तोष न हुआ वह शिलाखण्ड उसे पर्याप्त न मालूम हुआ! उसने अपने पिता सूर्य की प्रसन्नता के लिये एक पवित्र कुण्ड के पास बैठकर सूर्यदेव की उपासना करनी प्रारम्भ कर दी। उपासना से सूर्यदेव सन्तुष्ट हुये। इस प्रसन्नता के परिणाम स्वरूप सुन्दर घोड़ों से जुता हुआ एक देवरथ शिलादित्य के सामने आकर खड़ा हो गया! इस देवरथ पर सवार होकर शिलादित्य ने, अपनी विजय का डंका जिस प्रकार बजाया, उसकी कीर्ति आज भी चारों दिशायें गा रही हैं।

वल्लभीपुर पर अनेकों आक्रमण हुये, अनेकों शत्रुओं ने शिलादित्य के प्रताप और प्रभुत्व को मिटाने की इच्छा से आगे क़दम बढ़ाया, पर शिलादित्य के शौर्य और विशेष कर उस देवरथ के प्रताप के सम्मुख किसी की कुछ न चली। जिस समय वीर शिलादित्य अपने उस देवरथ पर बैठ कर रण-मैदान में अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करने लगता, उस समय बड़े बड़े प्रतापी शूर-वीरों की आँखों के सामने अँधेरा छा जाता। बड़े बड़े महारथियों के दाँत खट्टे हो जाते और वह वीर असंख्य शत्रु-सैनिकों पर विजय प्राप्त कर उनके बीच से मुसकुराता हुआ निकल जाता!

परन्तु समय भी बड़ा विचित्र होता है। जो आज संसार में शक्ति से संयुक्त लोगों पर अधिकार जमाता हुआ दिखाई देता है, वही दूसरे दिन संसार में अशक्त और भिखारी के रूप में पाया

जाता है। इसी खिलाड़ी समय ने शिलादित्य के ऊपर भी अपना मायावी चक्र फेंका। भला इस संसार में ऐसा कौन मनुष्य है जो समय के प्रबल झँकोरों में पड़ करके भी अपनी शक्तियों और अपने उत्थानमय संसार को उससे बचा सके!

जंगल में रहनेवाले म्लेच्छों की एक प्रबल सेना ने वल्लभीपुर पर आक्रमण किया। शत्रु-सैनिकों ने चारों ओर से उसे घेर लिया। शिलादित्य को चिन्ता नहीं थी। उसे अपने पराक्रम और उस देवरथ के अद्भुत गौरव पर विश्वास था। वह सोचता था, जिस दिन देवरथ पर सवार हो सैनिकों के साथ दुर्ग से बाहर निकलूँगा, उसी दिन, इन म्लेच्छ सैनिकों को केवल एक क्षण में ही वल्लभीपुर की सीमा से दूर भगा दूँगा। बात भी ऐसी ही थी! पर होनहार तो एक दूसरा ही अभिनय करनेवाला था! अतः शिलादित्य के एक मंत्री के मन में कपट का भाव उदय हुआ। वह इस बात को भली भाँति जानता था कि शिलादित्य का विजय-गौरव केवल उसके देवरथ के ही कारण है। यदि उसका देवरथ उससे अलग हो जाय, तो उसका अस्तित्व केवल एक साधारण नृपति के समान रह जायगा और वह देवरथ सहज ही—केवल उस पवित्र कुण्ड में गोरक्त डाल देने ही से—लुप्त किया जा सकता है।

मंत्री म्लेच्छ सेनापति से मिल गया। उसने देवरथ का सारा रहस्य उस पर प्रगट कर दिया। म्लेच्छ सैनिकों के हर्ष की सीमा न रही थी। उन्होंने उस कुण्ड में गो रक्त डाल दिया। सब-

मुच देवरथ लुप्त हो गया । म्लेच्छों ने, सहज ही में बल्लभीपुर पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। शिलादित्य ने, उस देवरथ के लिये, सूर्य की फिर उपासना की पर उसकी उपासना सफल न हुई और वह शत्रुओं के हाथ से मारा गया।

(३)

बल्लभीपुर में प्रलय का नाच होने लगा। म्लेच्छों ने उस पर अपना प्रभुत्व जमाकर शिलादित्य के महलों में आग लगा दी। अनेकों सैनिकों को काट डाला । दुर्ग गिरा कर भूमिसात कर दिये गये। चारों ओर से हाहाकार का शब्द उठने लगा। पर जब आग लग चुकी, तब तो वह अपना काम अवश्य ही समाप्त करेगी । यदि उसकी इस दानवी लीला से किसी का हृदय दुखी होता है तो इसमें उसका क्या दोष ? वह तो स्वयं प्रज्वलित होती नहीं ! प्रज्वलित करनेवाले की इच्छानुसार लोगों को उसका मधुर और कडुआ फल तो भोगना ही पड़ेगा !

शिलादित्य की कई रानियाँ थीं। उसकी मृत्यु के पश्चात् सबों ने उसी का अनुगमन किया। किन्तु एक रानी बच गई। उसका नाम पुष्पावती था। वह उस समय विन्ध्याचल पर्वत की तराई में बसे हुये चन्द्रावती नगरी के परमारवंशी अधीश्वर—अपने पिता के—पास थी । वह अपने पितृ-मन्दिर में स्थापित भवानी की, पुत्र प्राप्ति के लिये प्रति दिन उपासना किया करती थी। इधर इसकी उपासना समाप्त हुई और उधर बल्लभीपुर के भाग्य-गगन पर विपत्ति के भयंकर बादल मँडराये। पर पुष्पावती

को इसका पता तक न था! वह कुछ दास-दासियों को साथ में लेकर पतिगृह की ओर रवाना हुई। मार्ग में एक दूत ने उसे सन्देश दिया—वल्लभीपुर पर म्लेच्छों का अधिकार हो गया। महाराज मंत्री के कुचक्र से मारे गये। यह सन्देश क्या था? पुष्पावती के लिये वज्र का प्रहार था! उसका हृदय चूर चूर हो गया। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। उसने अपने अनुचरों से कहा—चिता सजाओ; मैं स्वामी का अनुगमन करूँगी! यदि वे ही संसार में नहीं, तो मेरे रहने से लाभ क्या? स्त्री जीवन का पुरुष ही तो सर्वस्व है! यदि पुरुष नहीं तो स्त्री रह कर क्या करेगी?

अनुचरों ने निवेदन किया—महाराणी शीघ्रता न करें। तनिक सोच-विचार से काम लें! इस समय आप ही एक ऐसी हैं जो वल्लभीपुर के राज्यवंश में बच गई हैं। यदि आप अकेली होतीं, तो आपके जीवन का इतना मोह न होता! आप अपने लिये नहीं गर्भ में स्थित भावी राजकुमार के लिये अपना जीवन कुछ दिनों तक स्थिर रक्खें।

अनुचरों की प्रार्थना युक्तिसंगत थी। पुष्पावती ने उसे मान ली। वह न अपने ससुराल की ओर गई और न पितृगृह की ओर। उसने समीपस्थ एक पहाड़ की गुफा का आश्रय लिया। कुछ दिनों के उपरान्त वहीं उस गुफा में—उस मिटे हुये राजवंश की आशा का जन्म हुआ। पुष्पावती इस नवजात बच्चे को लेकर पहाड़ की तराई में बसे हुए वीरनगर में गई। वहाँ एक

ब्राह्मणी रहती थी। ब्राह्मणी का नाम कमलावती था। पुष्पावती ने अपने बच्चे को कमलावती की गोद में डालकर स्वयं चिता का आश्रय लिया। चिता की गोद में बैठते हुये उसने कहा-बहन मैंने अपने इस बच्चे को तुम्हें सिपुर्द किया। तुम इसे अपना ही पुत्र मानकर इसका लालन-पालन करना। ब्राह्मण पुत्रों की जैसी शिक्षा-दीक्षा होती है, वैसी ही इसकी शिक्षा-दीक्षा भी करना। पर योग्य होने पर इसका विवाह किसी क्षत्रिय कुमारी के ही साथ करना।

(४)

ब्राह्मणी ने उसका नाम गुह रक्खा। 'गुह' नाम उसने इस लिये रक्खा कि वह पहाड़ की गुफा में पैदा हुआ था। ब्राह्मणी उसका लालन-पालन करने लगी। उसे अपनी आँखों की पुतली बनाकर रखने लगी। गुह कुछ बड़ा हुआ। साथ ही उसकी प्रवृत्ति भी चंचल हो उठी। शान्त-विचार की ब्राह्मणी चाहती थी गुह शान्त रहे, पर शेर का बच्चा गुह कैसे शान्त रह सकता था। उसे ब्राह्मणी की बताई हुई एक भी बात अच्छी न मालूम होती थी। उसका मन पढ़ने में भी न लगता था। वह अक्सर खेल खेलने में व्यस्त रहता। खेल भी किसी दूसरी वस्तु का नहीं धनुष और बाण का। कमलावती गुह की इस प्रवृत्ति से परेशान थी। वह लाख चेष्टा करके भी गुह को शान्ति के मार्ग पर न ला सकी।

उस समय वह ग्यारह वर्ष का हो चला था। उसके रग

रग से चंचलता टपक रही थी। वीरता और साहस के भाव उसकी आकृति पर नाच रहे थे। शासन करने की बलवती कामना उसके हृदय में सदैव उथल-पुथल सी करती रहती थी। यह कमलावती के पंजे से बाहर निकल गया और ईडरगांव में बसे हुये भील बालकों के साथ मिलकर खेलने, खाने तथा रहने लगा। थोड़े ही दिनों में उस पर समस्त भील बालकों का अकृत्रिम स्नेह हो गया। वे उसे अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय जानते और उसके संकेतों पर नाचने के लिये सदैव तैयार से रहते थे। जिस प्रकार भील बालकों की गुह पर ममता थी, उसी प्रकार वह भी अपने हृदय का सच्चा प्रेम उनके बीच लुटाने के लिये सदैव तैयार रहता था।

एक दिन भील बालक अपनी क्रीड़ा में मस्त थे। गुह भी उनकी मस्ती में मस्ती का राग अलाप रहा था। इसी समय एक भील बालक ने कहा—भाई! आज एक नया खेल खेलो! और हममें से किसी को अपना राजा बनाओ। बात सबों को अच्छी लगी। सब सोचने लगे, कौन बादशाह बनाया जाय? किसमें बादशाह होने की योग्यता है? सब की आंखें एक साथ ही गुह की ओर उठीं! गुह बादशाह बनाकर एक सिंहासन पर बैठा दिया गया। एक भील बालक ने उठकर अपनी उंगली चीर कर उसके रक्त का टीका गुह के मस्तक पर लगा दिया! यह टीका खेल का टीका था, पर इसके अन्दर प्रकृति की ओर से एक रहस्य छिपा हुआ था। यह रहस्य तो तब प्रगट हुआ, जब

भील-राज ने प्रसन्न होकर गुह को अपने राज्य का वास्तविक अधिकारी नियत कर दिया ! वाह्रे होनहार क्यों न हो ? तू ने ही शिलादित्य का विनाश किया था और तू ने ही शिलादित्य के बच्चे गुह के भाग्य का विकाश किया ! इसी गुह के नाम पर ही आज भी उसके वंश वाले भारत में 'गोहिलौत' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

———— —

चरवाहा

(१)

वर्षों से राजपूतों की गुलामी करते-करते भीलों का मन मथ सा उठा। वे न्याय से, अन्याय से, नीति से, षड्यंत्र से, किसी भी प्रकार से क्यों न हो ? दासता के काले आवरण को अपने ऊपर से फेंक देना ही चाहते थे ! अवसर पाकर भीलों ने, ईडर-प्रदेश के एकमात्र शासक नागादित्य को मार डाला। राजधानी में विद्रोह की अग्नि फैल गई। स्वाधीनता के नशे में पागल भील, नागादित्य के ध्वजा पताकों, महलों-दुर्गों और उसके कुटुम्बियों तक का निर्दयतापूर्वक वध करने लगे। चारों ओर से हाय हाय की आवाज़ आने लगी। भीलों की प्रलयंकरी क्रोध-मूर्ति के सामने किसी को जाने की हिम्मत न होती थी। जो जाता वही उनके कोपानल में पतिंगे की भाँति जल जाता—भस्म हो जाता !

लोग उदास थे। इसलिये नहीं कि नागादित्य का अध-पतन हो गया बल्कि इसलिये कि उसके तीन वर्ष के बालक बाप्पा की कैसे रक्षा की जाय ? कैसे वह भीलों की भयंकर कोप-अग्नि से बचाया जाय ! आखिर, नागादित्य की पुरोहितिनी, ब्राह्मण-कुमारी कमलावती आगे बढ़ी। उसने अपनी जान जोखों में डाल कर भी बाप्पा को अपने अंचल के नीचे छिपाया। यदि भीलों

को यह बात मालूम हो जाती तो क्या कमलावती की धज्जियाँ उड़ने में भी कुछ सन्देह था ! पर दया और ममता भी तो कोई वस्तु है ! कभी-कभी इसका प्रभाव मनुष्य को अपना सब कुछ मिटाने के लिये तैयार कर देता है ।

कमलावती बाप्पा को छिपा कर त्रिकूट-पर्वत के पास बसे हुये नगेन्द्र नामक नगर में ले गई । उस नगर में ब्राह्मणों का निवास था। सभी ब्राह्मण शंकर के उपासक थे । बाप्पा कुछ दिनों तक यों ही पलता रहा । जब वह पाँच छः वर्ष का हुआ तो उसे उन ब्राह्मणों की ओर से एक काम मिला । काम था उनकी गायें चराना । बाप्पा प्रति दिन जंगल में बड़े आनन्द से गायें चराने लगा ।

([illegible])

सायंकाल का समय था । गौयें जंगल से आकर अपने अपने स्थान पर आ चुकी थीं । उनका दूध दुहा जारहा था । बाप्पा उनकी सेवा में लगा हुआ था । गौओं में एक पयस्विनी गाय थी । जब इसका दूध दुहा जाने लगा तो उसके स्तन से दूध का एक बूँद भी न टपका । ब्राह्मणों को बाप्पा पर सन्देह हुआ । अब बाप्पा के प्रत्येक काम पर कड़ी दृष्टि रखी जाने लगी । ब्राह्मणों की यह सतर्कता बाप्पा से छिपी न रही । उसने जान लिया कि मैं अब लोगों की नजरों से गिर रहा हूँ और इसका कारण पयस्विनी गाय का दूध न देना है । पर बाप्पा का क्या अपराध था ? वह बहुत कुछ सोचने समझने पर भी उसके वास्तविक कारण को न समझ सका ।

बाप्पा का हृदय दुखी था। उसके मन में आश्चर्य और सन्देह उत्पन्न हुआ। वह सोचने लगा—यदि गाय दूध नहीं देती तो जंगल में कौन इसका दूध पी लेता है? मैं तो पीता नहीं, किसी को देखता भी नहीं। फिर बात क्या है? बाप्पा अब उस गाय के ऊपर कड़ी दृष्टि रखने लगा। एक दिन गाय जंगल के सघन भाग की ओर चली। बाप्पा भी पीछे-पीछे चला। गाय एक खुले हुये पर्वत की गुफा में घुस गई। बाप्पा भी छिपकर उसी में पैठ गया। वहाँ उसने जो कुछ देखा उससे उसके आश्चर्य की सीमा न रही। उसने देखा—गुफा के भीतर लताओं से घिरा हुआ एक छोटा कुंज है। कुंज के बीच में एक शिवलिंग रक्खा हुआ है। गाय खड़ी होकर उसी शिवलिंग पर दूध की वर्षा कर रही है। पास ही एक योगी, ईश्वर के ध्यान में मग्न होकर बैठे हुये हैं। बाप्पा इस दृश्य को देखकर अवाक् हो गया। उसके मन में कौतूहल की विचित्र भावना जागृत हो उठी।

योगी का नाम था हारीत। किसी मनुष्य को [illegible] आया हुआ जान कर हारीत के नेत्र खुल गये। योगी को कुछ क्रोध अवश्य हुआ। वह अपनी आँखों से बाप्पा की ओर देखने लगा। इधर बाप्पा की बड़ी विचित्र दशा हो रही थी। वह अपने दोनों हाथों को जोड़े, योगी के सामने खड़ा हुआ काँप रहा था। योगी का क्रोध दया में बदल गया। उसने बाप्पा से कहा—तू कौन है और क्यों यहां आया है? बाप्पा क्या उत्तर देता! उसे अपना पूरा हाल भी तो नहीं ज्ञात था। उसने अपने सम्बन्ध [illegible]

जो कुछ भी आधा-तिहाई लोगों से सुन पाया था, योगी को सुना दिया। योगी बाप्पा के ऊपर प्रसन्न हो उठा। उसने उसके सिर पर दया का हाथ रक्खा। बाप्पा उसका आशीर्वाद लेकर उस दिन अपने निवास-स्थान पर लौट गया।

(३)

सेवा बढ़ने लगी। मान चरणों पर चढ़ने लगा। बालक प्रतिदिन योगी के आश्रम में जाता और श्रद्धा से, भक्ति से, प्रेम से, आदर से उसके चरणों के ऊपर अपना हृदय लुटाया करता था। बालक के इस भक्ति-प्रेम ने योगी के हृदय में बाप्पा के लिये एक अलौकिक प्रेम की दुनिया बसा दी। वह बाप्पा से प्रेम करता, उसके शिर पर दया का हाथ रखकर उसके दिल का दुख दर्द पूछता। एक दिन हारीत ने बाप्पा से कहा—बेटा! मेरी तपस्या समाप्त हो गई। अब मैं कल अपनी इच्छानुसार स्वर्गलोक की यात्रा करूँगा। अतः कल तुम प्रातःकाल तड़के ही उठकर मेरे पास आजाना।

बाप्पा प्रकृति का आलसी था। वह प्रायः दिन चढ़ने पर चारपाई से उठा करता था। उस दिन वह अधिक देर तक न सोकर हारीत के पास पहुंचना तो चाहता था, पर नित्य की प्रकृति ने उसके ऊपर अपना प्रभाव डाल दिया। वह सो गया। जब उसकी नींद खुली तो वह आकुल होकर उठ बैठा और जंगल में हारीत के आश्रम की ओर दौड़ चला। वहाँ जाकर उसने देखा—हारीत एक स्वर्ण रथ पर बैठे हुये धीरे धीरे आकाश

की ओर जा रहे हैं। बाप्पा को नीचे खड़ा हुआ देखकर हारीत ने आकाश मार्ग में अपना स्वर्ण-रथ रोक दिया और बाप्पा को अपने पास आने के लिये आज्ञा दी। हारीत की इच्छा से, अकस्मात् बाप्पा का शरीर बीस हाथ बढ़ गया। परन्तु फिर भी बाप्पा स्वर्ण-रथ तक न पहुँच सका। हारीत ने उसे इस प्रकार विवश देखकर कहा—बेटा! चिन्ता न करो। अपना मुँह खोलो। बाप्पा आकाश की ओर मस्तक उठा मुँह खोलकर खड़ा हो गया हारीत ने अपने मुंह का थूक बाप्पा के मुख में पड़ने के लिये गराया। बाप्पा को कुछ घृणा हुई। उसने अपना मुख बन्द कर लिया। हारीत का थूक बाप्पा के मुख में न पड़कर उसके चरणों पर गिरा। हारीत का स्वर्ण-रथ सुनील आकाश में लुप्त होगया। यदि हारीत का थूक बाप्पा के मुंह में पड़ता तो वह अमर हो जाता पर फिर भी उसके प्रभाव से उसका सारा शरीर अस्त्र-शस्त्रों से अभेद्य हो गया।

(४)

झूलन पूर्णिमा का दिन था। नगेन्द्रनगर में चारों ओर आनन्दोत्सव मनाया जा रहा था। कुमारी लड़कियां संगीत आलाप करके हिंडोला झूल रही थीं। नगेन्द्रनगर के सोलंकी अधिपति की राजकन्या ने भी अपनी सहेलियों के साथ उत्सव कुञ्ज में प्रवेश किया। उसे भी झूलने की इच्छा हुई। वह झूलने लगी। पर झूले की रस्सी टूट कर गिर पड़ी। राजकुमारी चिन्ता में पड़ गई। वह इधर उधर अपनी आँखों को पसार कर देखने लगी।

उसने देखा एक छोटा सा बालक गायें चरा रहा है। राजकुमारी ने उसे अपने पास बुलाकर कहा—मुझे रस्सी का एक टुकड़ा ला दोगे। चरवाहा कोई दूसरा नहीं, बाप्पा था। वह बाल्यावस्था में ही अत्यन्त चंचल और कौतुक-प्रिय था। उसने राजकुमारी की सहचरियों से कहा—यदि तुम सब मेरा विवाह अपनी राजकुमारी के साथ कर दो, तो मैं रज्जु ला सकता हूँ। बालिकायें सहमत हो गईं। कौतुक ही कौतुक में राजकुमारी का विवाह बाप्पा के साथ कर दिया गया। उसने रस्सी लाकर बालिकाओं को दे दी। राजकुमारी अपनी सहेलियों के साथ झूलने लगी और बाप्पा फिर अपनी गायों में जा मिला।

कुछ दिनों के बाद बालिकायें इसको भूल चुकी थीं। राजकुमारी को भी विवाह के इस कौतुक का पता न था। जब वह सयानी हुई तो राजा को उसके विवाह की चिन्ता हुई। वह राजकन्या के लिये एक योग्य वर की खोज में लग गया। इसी समय एक सामुद्रिक शास्त्र के ज्ञाता पण्डित राज द्वार पर पहुँचे। राजा ने राजकुमारी के ब्याह की उनसे चर्चा की। पण्डित ने निवेदन किया—महाराज ! यदि आप राजकुमारी को मेरे सामने बुलायें तो मैं उनके हाथ की परीक्षा करके उनके विवाह के सम्बन्ध में कुछ बता सकता हूँ। राजा के आदेश से राजकुमारी पण्डित के सामने आई। पण्डित ने उसके हाथ की रेखाओं को देख कर कहा—महाराज ! यदि क्षमादान दें तो कहूँ।

राजा आश्चर्य में पड़ गया। उसने पण्डित के चेहरे पर

अपनी एक गम्भीर दृष्टि गड़ा कर कहा—कहिये, सत्य बात के लिये तो क्षमा का कोष सदैव खुला रहता है।

पण्डित ने निवेदन किया—श्रीमन्! राजकुमारी का विवाह हो चुका है।

हो चुका है! किससे? किसने किया! राजा की आँखें क्रोध से लाल हो गईं। अग्नि की चिनगारियाँ बरसने लगीं। राजा ने अनुचरों को आदेश दिया—उस मनुष्य का पता लगाओ जिसने गुप्त रूप से राजकुमारी का पाणिग्रहण किया है। राजा की आज्ञा चारों ओर फैल गई। कुछ दिनों तक तो लाख चेष्टा करने पर भी इसका भेद न खुला। इसके पश्चात् राजा को यह मालूम हो गया कि राजकुमारी का ब्याह करने वाला ब्राह्मणों की गायों का चरवाहा बाप्पा है। राजा इससे यदि आग-बबूला हो गया हो तो आश्चर्य क्या?

(५)

जंगल में गायें चर रही थीं। चरवाहे एक वृक्ष की छाया में बैठ कर आपस में क्रीड़ा कल्लोल कर रहे थे। उस छोटे से दल का सिरताज बाप्पा बीच में बैठा हुआ सब पर अपना शासन प्रगट कर रहा था। सब उसे अपना सरदार मानते और उसके लिये अपने प्राणों का बलिदान तक करने के लिये तैयार रहते थे। एक ने बातों के सिलसिले में बाप्पा से कहा—भाई! तुमने कुछ सुना है! मैंने जो कुछ सुना है, उसके अनुसार तो अब तुम्हारा यहाँ अधिक दिनों तक रहना ठीक न होगा।"

बाप्पा ने उत्तर दिया—मैंने सुना तो नहीं ! पर मेरे हृदय में एक आशंका सदैव हलचल मचाये रहती है । मैं उसी से दिन रात बेचैन रहता हूँ । आँखों में सुख की नींद नहीं आती । कभी सन्तोष की साँस नहीं लेता । तुम सब लोगों को मालूम है कि मैं ने झूलन आनन्दोत्सव के दिन कौतुक ही कौतुक में सोलंकी अधिपति की राजकुमारी के साथ अपना विवाह कर लिया था । यदि राजा के कानों में किसी भाँति यह बात पड़ गई तो इसमें सन्देह नहीं कि वह कभी मुझे क्षमा न करेगा ! क्या कहीं राजा को सचमुच तो नहीं मालूम हो गया ।

"ठीक—यही बात है—बाप्पा के साथी ने उत्तर दिया—राजा को इस गुप्त विवाह का पता चल गया है । उसने क्रोध में बावला बनकर तुम्हारी गिरफ़ारी के लिये अनुचरों को आदेश भी दे दिया है । अतः हमारी सम्मति है कि तुम अब यहाँ से चले जाओ । तुम्हारा अब यहाँ रहना विपत्ति से खाली नहीं ।"

बाप्पा चलने के लिये तैयार हो गया । उसने अपने साथियों से शपथपूर्वक यह प्रतिज्ञा कराई कि वे राजा को मेरा पता न बतायें और उसकी आज्ञायें गुप्तरूप से मेरे पास पहुँचाया करें। साथियों ने प्रसन्नतापूर्वक प्रतिज्ञा कर ली । बाप्पा अपने दो भील सहचरों के साथ वहाँ से चल कर एक पहाड़ की तराई में पहुँचा और वहीं रहने लगा । उन भील सहचरों में एक का नाम बाली और दूसरे का देव था । बाप्पा इन दोनों को प्राणों से भी अधिक प्यारा था । ये दोनों भील की सन्तान होने पर भी बाप्पा के

लिये सदैव अपना रक्त बहाने के लिये तैयार रहते थे। घर छूट गया, मा-बाप भी छूट गये पर उनके दिलों से वाप्पा की ममता दूर न हुई। वे उसके साथ-साथ जंगल में गये और अपने ऊपर विपत्ति का दुर्गम पहाड़ उठा कर भी वाप्पा को सुख देने की चेष्टा करने लगे।

वाप्पा उसी जंगल में रहने लगा। वह देवी की उपासना करता और अपने सहचरों के साथ इधर-उधर पर्यटन किया करता था। वाप्पा की उपासना समाप्त हुई, देवी ने उसकी साधना से सन्तुष्ट हो उसे अपना इष्ट दिया। वह प्रसन्न होकर अपने बन-वास जीवन को समाप्त कर नगर की ओर लौट रहा था। मार्ग में उसे उस समय के प्रसिद्ध सिद्ध पुरुष गोरखनाथ का दर्शन हुआ। गोरखनाथ ने वाप्पा के ऊपर प्रसन्न होकर उसे एक तलवार दी। इस तलवार को मंत्र से पवित्र कर उसके द्वारा गिरि-हृदय को भी विदीर्ण किया जा सकता था। गोरखनाथ की वह दीर्घ-तलवार आज भी उदयपुर में मौजूद है। वहाँ के राणा प्रति वर्ष, अपने सामन्त-सैनिकों के सहित उसकी पूजा किया करते हैं।

(६)

उस समय सारे भारत में मौर्य वंश का राज्य था। यह वंश परमार वंश की एक शाखा के नाम से विख्यात है। मालवे के सिंहासन पर बैठ कर, मौर्य वंश ने भारत के कोने कोने में अपना गर्वीला प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। इसी वंश का एक नृपति, उस समय चित्तौड़ के ऊपर भी राज्य कर रहा था। उसका नाम

मान था। बाप्पा ने एक बार अपनी मा के मुख से सुना था कि वह चित्तौड़ के मौर्य नृपति का भानजा है। बाप्पा अपने वनवास के जीवन को त्याग कर चित्तौड़ की ओर चला। जब वह चित्तौड़ में पहुँचा और उसका परिचय राजा को ज्ञात हुआ तो उसने सम्मानपूर्वक बाप्पा को अपने दर्बार में बुलाया और उसे अपनी सेना का अपने अधीनस्थ नायक बना दिया।

धीरे धीरे राजा का अनुराग बाप्पा पर अधिक बढ़ गया। सैनिक-सामन्त ईर्षा से जलने लगे। यत्र तत्र राजा के अनुराग की निन्दा भी की जाने लगी। बाप्पा को नगर विभाग का सर्वे-सर्वा देख कर पुराने सैनिकों की आँखों में अपमान का भाव नाच उठा। वे अब अवसर की प्रतीक्षा में रहने लगे कि कोई शत्रु चित्तौड़ पर आक्रमण करे और राजा को इस विशेष अनुराग का स्वाद चखायें।

सैनिकों की प्रतीक्षा पूरी हुई, विदेशी सैनिकों ने चित्तौड़ को चारों ओर से घेर लिया। राजा मानसिंह ने सैनिकों को बुला कर कहा—बहादुरो! अब तुम्हारी परीक्षा का समय समीप आ गया है। देखो, शत्रुओं ने नगर को चारों ओर से घेर लिया है। सैनिकों ने राजा के समाने राजकीय शस्त्र फेंक कर उत्तर दिया—महाराज लीजिये, यह अपना राजकीय शस्त्र! हमारे प्राण इतने सस्ते नहीं कि इस आग की ज्वाला में गिर कर पतिंगे की भाँति अपने जीवन को बर्बाद करें! आपका प्यारा बाप्पा इस समय कहाँ है? आपका सारा प्रेम तो बाप्पा के ही लिये था!

फिर उसे आपके गाढ़े दिनों में काम भी आना चाहिये।

बाप्पा का क्रोध उबल पड़ा। उसके हृदय की छिपी हुई वीरता जाग उठी। उसने आगे बढ़ कर हथियार उठा लिया और राजा के सामने शपथपूर्वक प्रतिज्ञा की कि शरीर में रक्त रहते हुये बाप्पा कभी भी समर से अपना पैर पीछे न हटायेगा। उसके इस महान बलिदान की भावना से सैनिकों का मन कांप उठा। सब ने बाप्पा के पीछे चल कर उसकी जयजयकार की और बाप्पा की शौर्य-सहायता से थोड़े ही देर में शत्रुओं को मार कर चित्तौर की सीमा से दूर भगा दिया। मानसिंह की विजय-पताका चारों ओर फहराने लगी। पर उसकी उस उड़ान में गुप्त रूप से यह भाव झलक रहा था कि यह केवल बाप्पा के शौर्य का प्रासाद है।

(७)

राजा मानसिंह का दर्बार लगा था। राजा, राज्य-दण्ड धारण करके सिंहासन पर बैठा हुआ था। प्राचीन सैनिकों के अधिपति ने उठकर राजा के सम्मुख निवेदन किया—श्रीमान्! हम चित्तौड़ के प्राचीन सैनिक हैं। अतः चित्तौर की सारी मान-मर्यादा आपकी ओर से हमें ही मिलनी चाहिये। बाप्पा कदापि इसका अधिकारी नहीं हो सकता! यदि वह होता है तो यह अन्याय है।

राजा ने उत्तर दिया—बाप्पा मान-मर्यादा का भूखा नहीं। वह वीर पुरुष है। देश पर अपने को बलिदान कर देना उसने भली भाँति सीखा है। भला ऐसा कौन क्षत्रिय पुरुष होगा जो

ऐसे वीर मनुष्य का सम्मान न करेगा।

"तो क्या हम लोग निराश हो जायँ—अधिपति ने कहा।"

हाँ—राजा ने उत्तर दिया—मैं बाप्पा को कभी उसके सम्मान से अलग नहीं कर सकता। सैनिक जल भुन उठे। उनका हृदय निराशा और अपमान से भर गया। उन सबों ने अपने कुटुम्बियों के सहित चित्तौड़ को छोड़ दिया और एक दूसरे ही स्थान पर अपनी नवीन बस्ती बसाई। इन विक्षुब्ध सैनिकों ने चित्तौड़ के विनाश का व्रत सा ले लिया। वे राजा मानसिंह के गौरव को धूल में मिलाने के लिये अनेकों उपायों का सहारा लेने लगे। उस समय बाप्पा चित्तौड़ में नहीं था। वह अपने पितृ-निवास में गया हुआ था। सैनिकों ने बहुत कुछ सोचकर निश्चय किया—जिस बाप्पा के लिये राजा ने हम लोगों का इतना अपमान किया है उसी के द्वारा राजा का विनाश भी कराना चाहिये। यही हुआ, उन सबों ने सम्मानपूर्वक बाप्पा को अपना अधिपति बनाया। बाप्पा ने भी हिताहित का विचार परित्याग कर इन अपमान से जले हुये सैनिकों का अधिनायकत्व स्वीकार कर चित्तौड़ पर चढ़ाई कर दी। संग्राम में राजा मान मारा गया। सैनिकों ने बाप्पा को चित्तौड़ के सिंहासन पर बैठाया। वह चरवाहा वीर बालक चित्तौड़ के सिंहासन पर बैठकर हिन्दू सूर्य के नाम से अवश्य प्रसिद्ध हुआ पर मामा को मारकर राज्य प्राप्त करने का घिनौना दाग उसके हाथों से छूटा होगा या नहीं इसमें सन्देह है!

सती की राख

(१)

सुरा की एक घूंट गले के नीचे उतार कर अलाउद्दीन ने आदेश दिया–इस किसान की सारी सम्पत्ति जब्त कर लो। इसने शाही आज्ञा का उल्लंघन करके भेड़ और बकरियाँ पाल ली हैं। एक दूसरे सौदागर की ओर आँखें घुमा कर उसने कहा—और इसे एक वर्ष के लिये कारावास में डाल दो। इसने सम्पत्ति सम्बन्धी शाही आज्ञा का पालन न करके अपने पास अधिक सम्पत्ति एकत्रित कर ली है, इसी समय एक दूत सम्राट के सामने आकर हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। अलाउद्दीन उसे देख कर मुस्कुराया। उसके चेहरे पर ऐसी प्रसन्नता नाच उठी, मानो वह उसके लिये बिहिश्त से कोई सुन्दर सन्देश ले आया हो।

दर्बार भंग हो गया। अलाउद्दीन ने बिलास-गृह में जाने के पहिले दूत को अपने पीछे-पीछे आने के लिये संकेत किया। गृह में मसनद के सहारे पलँग पर लेटते हुये अलाउद्दीन ने कहा—क्यों! क्या खबर लाया? क्या सचमुच वह चित्तौड़ की सुन्दरियों में अपूर्व है।

दूत ने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया—जहाँपनाह! सुन्दरियों में अपूर्व ही नहीं, वह देवबाला है, अप्सरा है, किन्नरी है! मैंने सुना है उसका स्वरूप सोने की भाँति दमदमाता और प्रभात की

सुनहली किरणों की भाँति चमचमाया करता है। इस समय समस्त चित्तौड़ में उसके सौन्दर्य की धाक जमी हुई है। वह भीमसिंह की स्त्री और उसका नाम पद्मिनी है। यदि वह देवबाला किसी भाँति बादशाही महल में आ जाय तो इसमें सन्देह नहीं कि यह महल जगमगा उठे, उसकी रूपराशि से इसका श्री-प्रकाश दूना हो जाय।

हँस कर, दाढ़ी पर हाथ फेरते हुये अलाउद्दीन ने कहा:—दूत! तुम्हारा यह सन्देश, सचमुच मेरे जीवन में सुधा घोलने वाला है। लो इसके बदले में यह पाँच सौ मुद्रा पुरस्कार। जाओ, इसी समय सेनापति को मेरे पास भेज दो।

दूत चला गया। बादशाह सोचने लगा, वास्तव में क्षत्रिय-कुमारियों में अपूर्व सौन्दर्य होता है। उनका उठा हुआ चेहरा, स्वर्ण सा शरीर और रसवती विशाल आँखें एक साथ ही मन-मानस में प्रलय की आग लगा देती हैं। परन्तु जितना उनमें सौन्दर्य होता है, उतना ही वे प्रकृति की ओर से कर्कश और कठोर भी तो होती हैं। मैंने सुना है, वे अपने पति के प्रेम में पागल होती हैं, उसके लिये अपने प्राणों का बलिदान तक करने को प्रति क्षण तैयार रहती हैं! तो क्या पद्मिनी भी ऐसी ही होगी! उसकी दृष्टि में उसका भीमसिंह देवता के समान होगा। पर नहीं, संसार में दौलत भी तो कोई वस्तु है! वह बड़े बड़े ज्ञानियों और धर्म-प्राण मनुष्यों की आँखों में भी अपनी सलाई घुमा देती है। जिस समय पद्मिनी के पास मेरे प्रेम का सन्देश पहुँचेगा,

उस समय वह अवश्य निहाल हो जायगी—अवश्य मुझे अपना प्रियतम—अपना प्राण प्यारा बनायेगी !

अलाउद्दीन सोच-सागर में निमग्न था। उसके मन में अनेकों प्रकार की भावनायें क्षण क्षण पर उठ रही थीं। इसी समय, सेनापति ने बादशाह के सामने मस्तक झुकाया। बादशाह ने, उसकी अदब भरी नम्रता स्वीकार करते हुये कहा—सेनापति ! तुम मेरे इरादे से अपरिचित नहीं ! तुम जानते हो कि मैं संसार की सुन्दरियों का कितना सम्मान करता हूँ—उनके लिये किस भाँति अपने जीवन को भी बर्बाद करने के लिये तैयार रहता हूँ। मैंने सुना है चित्तौड़ की मरुभूमि में एक अपूर्व सुन्दरी है। वह चित्तौड़ के संरक्षक भीमसिंह की स्त्री है, उसका नाम पद्मिनी है। मेरी इच्छा है उसे किसी भाँति शाही महल में लाया जाय ! अतः कल प्रातःकाल तुम मेरे साथ सेना सजा कर चित्तौड़ पर आक्रमण करो। यदि पद्मिनी के लिये मुझे अपना शासन भी गवाँना पड़े तो चिन्ता नहीं, यदि सम्राट की पदवी को भी दूर फेंकना पड़े तो परवाह नहीं ! कहाँ तक कहूँ, सेनापति ! बस अब एक इसी शब्द में ही सब कुछ समझ लो कि वही मेरा जीवन और वही मेरा प्राण है।

सेनापति बादशाह की आज्ञा शिर पर धारण कर चला गया।

(२)

चित्तौड़ की सीमा पर शाही खीमे गड़ गये। सैनिक आक्र-

शस्त्र साफ करने लगे। घोड़े हिनहिनाने लगे। हाथी चिंघाड़ने लगे संग्राम वाद्य बजने लगे। राजपूतों के विस्मय का ठिकाना न रहा। वे सब सोचने लगे और आपस में एक दूसरे से कहने लगे—किसकी तालू में दाँत जमे हैं ? किसने शक्ति का घूँट पिया है ? किसने चित्तौड़ की सीमा पर संग्राम-वाद्य बजाने का साहस किया है ?

राजपूतों का दर्बार लगा था। भीमसिंह प्रतिनिधि स्वरूप सिंहासन पर बैठे हुये थे। राजपूत सैनिक उसी संग्राम-वाद्य पर विचार कर रहे थे। इसी समय एक द्वार-पहरी ने राणा के पास पहुँच कर निवेदन किया—महाराणा! अलाउद्दीन सम्राट का एक दूत आपकी सेवा में कुछ सन्देश लेकर आया हुआ है। यदि आज्ञा हो तो उसे आपकी सेवा में उपस्थित करूँ।

अलाउद्दीन का दूत और मेरे पास! आश्चर्य है! अच्छा ले आओ—भीमसिंह ने कहा।

दूत राणा के सामने आकर हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। उसने निवेदन किया—महाराज, यह शाह का पत्र है। राणा ने पत्र हाथ में ले लिया। पत्र पढ़ते ही भीमसिंह का हृदय क्रोध से उत्तप्त हो गया। उन्होंने पत्र दूर फेंक कर दूत से कहा—जाओ, निर्लज्ज शाह से कह दो—चित्तौड़ के वीर-सैनिक अपनी मान-मर्यादा पर सब कुछ बर्बाद करने के लिये प्रतिक्षण तैयार रहते हैं।

दूत चला गया। राणा ने मंत्री को आदेश देकर राजपूत

सर्दारों को पत्र का सम्वाद सुनाया। सरदारों के बाजू फड़क उठे। आँखों में वीररस उमड़ आया। हृदय आवेश से भर गया। सब ने एक साथ एक ही स्वर में कहा—चित्तौड़ की महारानी का यह अपमान केवल उनका अपमान नहीं, प्यारे चित्तौड़ का अपमान है। चित्तौड़ के वीर सैनिक ऐसे अपमान का बदला चुकाने के लिये प्रति क्षण तैयार रहते हैं। महाराणा! आदेश दें, जिन हाथों से यह पत्र लिखा गया है उसका जब तक विनाश न न हो जायगा तब तक चित्तौड़ी वीरों की आँखों में सुख की नींद नहीं।

आज्ञा की देर थी। :तलवारें म्यान से कढ़ गईं। आकाश चमक उठा। पृथ्वी कम्पित हो गई। वीर-हुंकार से दिशायें गूँज उठीं।

उधर अलाउद्दीन के शिविर में, क्रोध अपना प्रलय-नृत्य करने की तैयारी कर रहा था। दूत के मुख से राणा-द्वारा अपने अपमान की बात सुन कर सम्राट का लोलुप हृदय जल उठा। उसने सेनापति का बुला कर आदेश दिया—सेनापति! इसी समय लड़ाई का नक्कारा बजा कर चित्तौड़ को घेर लो। एक एक राजपूत को तलवार की घाट उतार कर उनसे, इस अपमान का बदला ले लो। उनकी मान-मर्यादा को मिट्टी में मिलाकर पद्मिनी का डोला शिविर में दाखिल करो।

दोनों ओर से संग्राम-वाद्य बज उठे। दोनों ओर के सैनिक एक दूसरे से भिड़ गये। एक ओर से "हर हर महादेव" और दूसरी ओर से "अल्ला हो अकबर" का महानाद होने लगा। देखते देखते

खून की नदियाँ बह चलीं। हजारों मनुष्यों के मुण्ड कट कर पृथ्वी पर लोटने लगे। राजपूत वासना के उन सहायकों को मूली की भाँति काटने लगे। राजपूतों की इस प्रकाण्ड वीरता के सामने यवन सैनिकों के पैर उखड़ गये। अलाउद्दीन अपनी वासना को हृदय में छिपा कर लौट चला। राजपूतों की श्री ने हँस कर कहा—चित्तौड़ की बालाओं को, बुरी आँखों से देखना उतना सरल नहीं है सम्राट, जितना तुमने अपनी कायरता के कारण सोच रक्खा था!

(३)

वासना का दर्बार लगा था। प्यालियाँ पर प्यालियाँ ढुलक रही थीं। आंखों में खुमारी थी, मुख पर क्रूरता का भाव। अलाउद्दीन ने दूत को बुला कर कहा—दूत! जाओ, चित्तौड़ के राणा को मेरा यह संदेश सुनाओ—शाह, इस छोटी सी हार से ही पराजय स्वीकार करनेवाले नहीं हैं! राजपूत इस छोटी सी विजय से ही न फूल जांय! अभी तो उन्हें लाखों यवन सैनिकों से सामना करना है। जिस समय ये समस्त वीर चित्तौड़ के क़िले को घेर कर उस पर चारों ओर से आक्रमण करेंगे, उस समय चित्तौड़ के क़िले की एक ईंट भी समूची न बचेगी। जाओ, राणा से कहो, यदि वे पद्मिनी का मुँह मुझे दर्पण में दिखावें तो मैं अपना घेरा उठा लूँ!

दूत चित्तौड़ गया। अलाउद्दीन का प्रस्ताव सुन कर राजपूतों की भुजायें फड़क उठीं। सब ने गरज कर कहा—कभी नहीं, यह नहीं हो सकता, राणा ने राजपूत सैनिकों को शान्त करते

हुये कहा—वीरो ! आवेश में आने की आवश्यकता नहीं ! सोच-विचार से भी काम लेना चाहिये। यह निश्चय है कि यदि संग्राम हुआ तो सहस्रों सैनिकों की जानें जायँगी—देश असन्तोष के भाव में सन जायगा। इसलिये देश को इस भयंकर विपत्ति से बचाने के लिये, यदि पद्मिनी का मुँह शाह को दर्पण में दिखा दिया जाय तो मेरी सम्मति में कोई अनुचित कार्य न होगा।

राणा की स्वीकृति मिली। सैनिक चुप हो गये। दूत ने शाह के पास जाकर सन्देश दिया। शाह हर्ष से नाच उठा। उसने अपने कुछ शरीर-रक्षकों के साथ चित्तौड़ के क़िले में प्रवेश किया। राजपूतों ने उसे अपना आतिथ्य जान कर उसका स्वागत किया और पद्मिनी का मुँह उसे दर्पण में दिखा दिया। पद्मिनी का मुँह दर्पण में देख कर अलाउद्दीन के हृदय की वासना उबल पड़ी। पर उसने अपनी वासना को छिपा कर राणा से कहा—राणा आज्ञा दें।

अलाउद्दीन क़िले से चला। भीमसिंह उसे पहुँचाने के लिये उसके साथ चले। मार्ग में अलाउद्दीन ने सीटी बजाई। कुछ छिपे हुये यवन सैनिकों ने निकल कर भीमसिंह को पकड़ लिया! भीमसिंह ने गर्ज कर कहा—धोखा! विश्वासघात! कायर! राजपूतों पर कायरतापूर्ण विजय प्राप्त करने का अन्तिम परिणाम भी घातक ही होता है। तेरी यह अभिलाषा मुझे बन्दी बनाने ही से तो जहन्नुम में जायगी और इसके साथ ही साथ

तेरा भी पतन होगा।

अलाउद्दीन ने हँस कर उत्तर दिया—राणा जो कुछ हो! पर अब तुम मेरे बन्दी हो और अब तुम्हारा छुटकारा उसी समय होगा जब तुम्हारी पद्मिनी मुझे अपना प्रेम-दान देगी।

राणा की आँखें क्रोध से लाल हो उठीं। हृदय वीरता के उन्माद में नाच उठा। उन्होंने गर्ज कर उत्तर दिया—कायर! निर्लज्ज! अधम! चित्तौड़ के राणा के सामने, चित्तौड़ की महा-राणी के लिये यह शब्द! सिंह को बन्दी कर के सिंहनी का अप-मान! चुप रह।

अलाउद्दीन खिलखिला कर हँस पड़ा। उसने सिपाहियों को आदेश दिया—ले जाओ! राणा का दिमाग़ कुछ उन्मादी हो चला है और यह तभी शान्त होगा जब राणा की आँखों के सामने पद्मिनी मुझे अपना प्रेम-दान देगी।

(४)

एक निभृत कक्ष में पद्मिनी दो आत्मीयजनों के साथ मंत्रणा कर रही है। उनमें एक का नाम गोरा और दूसरे का नाम बादल है। गोरा ने क्रोध के स्वर में कहा—कपटी और कुचालियों के साथ कपट का अभिनय करना ही ठीक है। इसलिये अब देर न लगा कर अलाउद्दीन के पास सम्वाद भेज देना चाहिये कि पद्मिनी आपके पास आने को तयार है पर उसने राजवंश में जन्म लिया है। वह इस समय चित्तौड़ की साम्राज्ञी है। अतः उसके साथ उसकी चिरसहचरियाँ भी शाह के शिविर में प्रवेश करेंगी

और जब पद्मिनी वहाँ पहुँचेगी तो वह पहिले भीमसिंह से थोड़ी देर एकान्त में मिल कर तब शाही-शिविर में प्रवेश करेगी।

मंत्रणा निश्चित हो गई। दूत अलाउद्दीन के पास भेज दिया गया। अलाउद्दीन पद्मिनी के आगमन का सम्वाद सुन कर हर्ष से फूल उठा। उसकी आँखों में प्रसन्नता छलक पड़ी। उसने राजपूतों के प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर अपनी स्वीकृति चित्तौड़ भेज दी। उधर राजपूत तैयारियाँ करने लगे, इधर अलाउद्दीन का एक एक क्षण प्रलय और युग के समान बीतने लगा।

निश्चित दिन पर सात सौ पटावृत शिविकायें शाही खीमे की ओर रवाना हुईं। प्रत्येक शिविका के भीतर चित्तौड़ का एक योद्धा अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित गुप्त रूप से बैठा हुआ था। प्रत्येक शिविका को ले चलने के लिये, छः छः अस्त्र-शस्त्रधारी योद्धा नियत थे। शाही खीमें के पास पहुँच कर प्रत्येक शिविका, अलग अलग, शाही शिविर में गई। इन सात सौ सहचरियों के साथ पद्मिनी के आगमन को सुन कर अलाउद्दीन पुलकित हो उठा। उसके रग रग में प्रसन्नता का तूफान सा दौड़ चला।

अलाउद्दीन की आज्ञा से एक दूसरे शिविर में भीमसिंह और पद्मिनी के सम्मिलन का प्रबन्ध हुआ। पद्मिनी वहाँ कहाँ थी? वहाँ तो थे चित्तौड़ के वीर। छद्मवेशी पद्मिनी बन्दी भीमसिंह के शिविर में दाखिल हुई। अलाउद्दीन स्वयं उस शिविर के फाटक पर विद्यमान था! आधा घंटा समाप्त हो चला पर पद्मिनी न लौटी। अलाउद्दीन ने आकुल होकर शिविर का फाटक खोल

दिया। वहाँ देखा तो चिल्ला उठा—"धोखा! दौड़ो! भाग कर जाने न पावे!" पर पिंजड़े से निकले हुये सिंह को कौन पकड़ने वाला था! राजपूत सैनिक अपनी जान पर खेल उठे। घमासान संग्राम मच गया। दिशायें काँप उठीं। आकाश गर्ज उठा। गोरा ने आकाश में बिजली की भाँति तलवार चमका कर यवनों के दाँत खट्टे कर दिये। अलाउद्दीन मन मसोस कर रह गया! उसने आह मार कर कहा—हाथ में आई हुई चिड़िया निकल गई। गोरा की आत्मा ने मौन रूप में हँसकर उत्तर दिया—मेरा काम पूरा हुआ। चिड़िया तो इस समय स्वतंत्र रूप से चित्तौड़ के दुर्ग में दाना और पानी चुग रही है! बच गया है अब केवल तेरी वासना का रोना! रो आँसू बहा और याद रख, राजपूतों की तलवारें प्रलयकाल की भाँति गर्जती हैं।

(५)

आधी रात का समय था। राणा लक्ष्मणसिंह अपने प्रासाद कक्ष में बैठे हुये चिन्ता के समुद्र में गोते लगा रहे थे। उनकी आँखों के सामने चित्तौड़ के दुर्दिन एक एक करके आने लगे। चित्तौड़ के आकाश पर घिरी हुई मेघमाला अपना भयंकर दृश्य दिखाने लगी। चारों ओर से महा युद्ध के भीषण रव उनके कानों में पड़ने लगे। राणा सोचने लगे, किस उपाय से प्यारे चित्तौड़ की रक्षा करूँ? क्या अपने द्वादस पुत्रों में से एक भी इस समराग्नि से न बच सकेगा? क्या चित्तौड़ का राजवंश, अंधकार-क्षितिज में विलीन हो जायगा?

राणा यह सोच ही रहे थे, इसी समय उस महा निस्तब्धता को भंग करते हुये आवाज आई—"मुझे भूख लगी है।" राणा विस्मय से चमत्कृत होकर इधर उधर देखने लगे। उन्होंने देखा कक्ष के मध्य में सुवर्ण-प्रदीप धीरे धीरे जल रहा है। प्रकोष्ठ भित्ति में एक अद्भुत मूर्त्ति विराज रही है।

राणा ने चित्तौड़ की अधिष्ठात्री देवी को सामने प्रत्यक्ष रूप में देख कर कहा—माँ! क्या अब भी तुम्हारी क्षुधा शान्त नहीं हुई! मेरे वंश के दस सहस्र वीरों ने रणांगण में अपना शोणित बहा कर पृथ्वी को लाल कर दिया है। उनके शोणित पान से क्या तुम्हारे क्षुब्ध हृदय की प्यास नहीं बुझी? देवी ने उत्तर दिया—जब तक मैं चित्तौड़ के द्वादश राजपुत्रों का रक्त पान न करूँगी, तब तक मेरी प्यास न शान्त होगी और चित्तौड़ भी विदेशियों के अधीनस्थ होने से न बचेगा।

प्रभात हुआ, राणा ने देवी का सन्देश राजपूत सैनिकों को सुनाया। राजपूतों में उत्तेजना लहराने लगी। वीरता रगों में नाचने लगी। देवी के आदेश पर, मातृभूमि के उद्धार के लिये एकादश राजपुत्रों ने, थोड़े ही दिनों में अपना बलिदान चढ़ा दिया, केवल अजयसिंह बच रहे। राजवंश की रक्षा तथा राणा की आज्ञा पालन के लिये वे थोड़े से सैनिकों के साथ कैलवारा प्रदेश की ओर रवाना हो गये। शेष राजपूत राणा के साथ केसरिया वस्त्र पहन कर समराग्नि में कूद पड़े। उधर राजपूत समरांगण में गये और इधर पद्मिनी ने आठ सहस्र क्षत्राणियों के

साथ चिता में प्रवेश किया । राजपूतों की संख्या धीरे धीरे कम होने लगी । सहस्रों यवन सैनिकों को भूमि पर सुला कर राजपूत समाप्त हो गये । अलाउद्दीन के हर्ष की सीमा नहीं थी । वह विजय-दुन्दुभी बजाता हुआ चित्तौड़ के दुर्ग में पहुंचा । पर उसे वहाँ जो कुछ मिला, वह थी सती रमणियों के चिता की राख । क्या उस राख के प्रत्येक कण पर यह नहीं लिखा था कि चित्तौड़ की सच्ची विजय ? अलाउद्दीन हाथ मल कर रह गया ।

जय की पताका

(१)

अनाज के खेत लहलहा रहे थे। सुदूर तक हरियाली ही हरियाली दृष्टि आती थी। धान के एक खेत के मध्य में एक ऊँचा मचान बना हुआ था। मचान के ऊपर बैठी हुई एक कृषक-बालिका शस्य विघ्नकारी पक्षियों को बड़ी सतर्कता से उड़ा रही थी। इसी समय उसके कानों में शब्द पड़ा "देखो वह शूकर भागा जा रहा है। उसके पीछे द्रुत गति से अश्व दौड़ाओ और ठीक निशाना लगा कर अस्त्र-संचालन करो।" बालिका चमक उठी। उसने आँखें घुमा कर देखा—बनैला खूंख्वार शूकर द्रुत गति से उसके मचान की ओर दौड़ा आ रहा है। बालिका ने कमर से छूरी निकाली और मंच के ऊपर से ही शूकर के शरीर पर प्रहार किया। छुरी शूकर के शरीर में घुस गई। वह अचेत होकर गिरा और प्राण-शून्य हो गया।

शिकारियों के नायक अरिसिंह ने शूकर के शव के पास पहुँच कर अपने सहचरों से कहा—कई मीलों तक इसका पीछा करने के पश्चात् भी हमारे शस्त्र इसके शरीर को न भेद सके, पर ऐसा कौन महावीर है, जिसके एक साधारण छुरी के आघात ने ही इसको धराशायी बना दिया। सर्दारो! देखो, तो इस निर्जन वन में वह कौन महापुरुष है।

सर्दारों ने इधर उधर देख कर अरिसिंह की सेवा में निवेदन किया—महाराज! इधर कुछ दूर तक तो कोई दृष्टि-पथ में नहीं आता। हाँ, शस्य के खेत में मंच पर बैठी हुई एक कृषक बालिका पक्षियों को अवश्य उड़ा रही है।

तो क्या—अरिसिंह ने कहा—यह उसी के हाथों का प्रहार है! यदि हाँ, तब तो वह अवश्य कोई वीर बाला होगी! पर उससे परिचय कैसे प्राप्त किया जाय! किसी बालिका से एकान्त में सम्भाषण करना तो अन्याय कहा जाता है।

नदी के तट पर, घोड़ा बाँधकर अरिसिंह अपने सहचरों से बात कर रहे थे। उस कृषक-कुमारी की वीरता की प्रशंसा रह रह उनकी जबान पर आ रही थी। इसी समय एक मिट्टी का टुकड़ा सनसनाता हुआ आया और घोड़े के पैर में लग गया। घोड़ा गिर पड़ा। अरिसिंह विस्मित हो उठे। सर्दारों ने निवेदन किया—महाराज! वह देखिये, कृषक बालिका पक्षियों को उड़ाने के लिये मंच पर से मिट्टी के टुकड़े फेंक रही है और उसी का चलाया हुआ एक टुकड़ा आकर घोड़े के पैर में लग गया है।

अरिसिंह का हृदय विस्मय से भर गया। बालिका का यह विपुल शौर्य उनके रग रग में समा गया। उनके हृदय के अन्तर का कोना कोना श्रद्धा से भर गया। बालिका अपने को अपराधी जान कर स्वयं अरिसिंह के सामने उपस्थित हुई। उसने हाथ जोड़ कर निवेदन किया—महाराज! मेरा अपराध क्षमा कीजिये। मैं एक दरिद्र किसान की बालिका हूँ। मैंने मिट्टी का टुकड़ा आप के

घोड़े पर नहीं, किन्तु खेत नाश करनेवाले पक्षियों को उड़ाने के लिये चलाया था।

बालिके! न डरो—अरिसिंह ने उत्तर दिया—जाओ! ऐसा कौन व्यक्ति है, जो तुम्हारे इस अपराध पर तुम्हें दण्ड दे! मैं तो भगवान से प्रार्थना करूँगा कि ऐसे अपराध की शक्ति मेवाड़ की सभी कुमारियों में जागृत हो!

बालिका सकुचा गई। अरिसिंह उसकी सकुचाहट अन्तर में छिपा कर चित्तौड़ लौट गये।

(२)

जंगल में धान के खेत के पास पहुँच कर अरिसिंह ने सैनिक से कहा—सैनिक! क्या तुम उस कृषक का पता लगा सकते हो जिसकी बालिका ने अपनी मिट्टी के ढेले के प्रहार से मेरे अश्व को धराशायी बना दिया था!

क्यों नहीं महाराज—सैनिक ने उत्तर दिया—वह समीपस्थ के एक गाँव में रहता है।

जाओ उसे बुला लाओ। मैं यहीं बैठता हूँ। उससे कहना और कहना बड़ी विनम्रता से कि चित्तौड़ के राणा के कुमार अरिसिंह तुम्हें बुला रहे हैं।

सैनिक चला गया। अरिसिंह मन में सोचने लगे—वह साधारण कृषक, दरिद्र की बालिका है पर उसके हृदय में वह अमूल्य निधि है जो राजमहल में रहने तथा पलने वाली राज-कुमारियों के हृदय में नहीं हुआ करती! जिस बालिका के एक

साधारण छुरी के आघात ने बनैले शूकर का विनाश कर दिया, जिसके एक मिट्टी के टुकड़े ने मेरे घोड़े को धराशायी कर दिया, यदि उस बालिका का पाणिग्रहण करके उससे सन्तान पैदा की जाय तो क्या वह सन्तान समस्त विश्व को विकम्पित करनेवाली न होगी! अवश्य! उसकी सन्तान बली और बहादुर होगी। उसके द्वारा प्यारे चित्तौड़ का उत्थान होगा।

राणा यह सोच ही रहे थे, इसी समय कृषक ने कुँवर को अभिवादन किया। अरिसिंह ने उसे सम्मानपूर्वक अपने समीप बैठाते हुए अपना मन्तव्य कह सुनाया। उसने उस पर तनिक विचार न कर के अरिसिंह के प्रस्ताव को सिर हिला कर नामंजूर कर दिया।

अरिसिंह चित्तौड़ चले गये। किसान के घर पहुंचने पर उसकी स्त्री ने उससे पूछा—क्यों क्या बात थी? चित्तौड़ के कुँवर ने तुम्हें क्यों बुलाया था?

"उनकी इच्छा मेरी बालिका से विवाह करने की है"

"तो इसका क्या उत्तर दिया?"

"उत्तर क्या देता? मैंने उसे अस्वीकार कर दिया।"

"बहुत बुरा किया!! भला इससे बढ़कर और क्या होता कि कन्या चित्तौड़ की महारानी बन जाती। उसका भाग्य जग जाता और सहस्त्रों मनुष्यों पर वह शासन करती। यदि अपना मेरा और उस बालिका का कल्याण चाहते हो तो अभी उसे लेकर चित्तौड़ जाओ और सम्मानपूर्वक राणा के हाथों में सौंप

आओ। राणा इस बालिका को पाकर तुम्हारे द्वारा हुये अपमान को अवश्य भूल जायँगे।

कृषक लाचार था। वह अपनी बालिका को लेकर चित्तौड़ गया। अरिसिंह ने सादर उसे पत्नी रूप में ग्रहण किया। उससे जो सन्तान पैदा हुई उसी का नाम संसार में 'हम्मीर' प्रसिद्ध हुआ।

(३)

ननिहाल में मामा के घर बारह वर्ष के बालक हम्मीर ने अपनी माँ से कहा—माँ कोई कहानी सुनाओ।

माँ कहने लगी—बेटा! उस समय चित्तौड़ के ऊपर अलाउद्दीन खिलजी ने आक्रमण किया था। वह चित्तौड़ की महारानी पद्मिनी को अपनी वासना का शिकार बनाना चाहता था। भला राजपूतों को यह कब स्वीकार होता! वे दुर्गा के आदेश से हाथ में तलवार लेकर मैदान में निकल पड़े। अधिक वीरता दिखाने पर भी राजपूत अधिक यवन सैनिकों के सामने न टिक सके। सब एक एक करके रण-शय्या पर सो गये। बेटा! उसी भीषण संग्राम में तुम्हारे पिता और तुम्हारे बाबा का स्वर्गवास हुआ। इधर राजपूत सैनिकों ने मातृभूमि की वेदी पर अपना बलिदान चढ़ाया और उधर पद्मिनी कई सहस्र वीरांगनाओं के साथ चिता में जलकर मर गई! केवल मैं अभागिनी बच गई। इसका कारण यह था कि मैं उस समय चित्तौड़ में नहीं बल्कि तुम्हें लिए हुए यहां थी।

इस समय चित्तौड़ के दुर्ग पर अलाउद्दीन की विजय-पताका फहरा रही है। राजपूतों का समस्त गौरव मिट चुका है। सारी मान-मर्यादा धूल में मिल चुकी है। दिल्ली सम्राट की संरक्षता में मालदेव नामक एक व्यक्ति चित्तौड़ के सिंहासन पर राज्य कर रहा है। मैंने सुना है तुम्हारे पिता के बन्धु और तुम्हारे चाचा अजयसिंह चित्तौड़ को पुनः प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे हैं। पर अभी उन्हें पार्वतीय देशों के अधिपति मुंजे से बुरी तरह हार खानी पड़ी है इसलिये आशा नहीं कि प्यारे चित्तौड़ की रज फिर हम लोग स्वतंत्रता पूर्वक अपने मस्तक पर लगा सकें।

आशा नहीं मां!—आश्चर्य से हम्मीर ने कहा—तुम्हारे मुख से तो ऐसे शब्द नहीं निकलने चाहिये! तुम अपने हम्मीर के सिर पर दया का हाथ फेरो और उसे चाचा के पास जाने के लिये आदेश दो। फिर देखो थोड़े ही दिनों के अन्दर इस पतन की कहानी को हम्मीर किस रूप में परिणत करता है।

बेटा, मां ने कहा—स्वदेश के कल्याण के लिये, प्यारे चित्तौड़ के उद्धार के लिये, देशसेवा का महाव्रत लेनेवाले अजय सिंह की सहायता के लिये मेरा प्रतिक्षण आदेश ही है। जाओ प्रेम से जाओ! हँसते और मुसकुराते हुये जाओ! जननी जन्म भूमि के उद्धार के लिये राजपूत क्षत्राणियाँ अपने पति और पुत्रों तक की चिन्ता नहीं किया करतीं।

अजयसिंह चिन्ता में निमग्न थे। उनका हृदय वेदना से दुखी हो रहा था। उनकी आँखों के सामने प्यारे चित्तौड़ का स्वरूप रह

रह कर नाच रहा था। विदेशी सत्ता की जंजीर में जकड़ी हुई मातृभूमि अपना करुण सन्देश रह रह उनके कानों में डाल रही थी। वे रह रह कर अधीर हो रहे थे और मनमें सोच रहे थे किस उपाय से चित्तौड़ की रक्षा करूँ? कैसे मुंजे से अपने अपमान का बदला चुकाऊँ। मेरे पुत्र आजिम और सुजन से तो कुछ हो नहीं सकेगा? उनमें तो इतनी शक्ति नहीं कि उनकी सहायता से मैं चित्तौड़ का उद्धार कर सकूँ।

इसी समय हम्मीर ने अजय को प्रणाम किया। चिन्तामग्न अजयसिंह ने आंखें खोल कर कहा—बेटा हम्मीर! बहुत दिनों पर तुम्हारा यह मुख देखने को मिला। कहो अकेले इस आपत्ति के समय कहां आये। हम्मीर ने दृढ़ता से उत्तर दिया—चाचा जी प्यारे चित्तौड़ के उद्धार के लिये, आपकी सहायता के लिये और मुंजे का मस्तक छिन्न भिन्न करने के लिये! आदेश दें, जब तक आपका हम्मीर, आपके अपमानकारी मुंजे का मस्तक काटकर आपके सामने न ला देगा तब तक उसे चैन नहीं, आराम नहीं, सन्तोष नहीं!

अजयसिंह ने आश्चर्य भरी दृष्टि से हम्मीर को देख कर कहा—बेटा यदि तुम्हारी यही अभिलाषा है तो जाओ! भला वीरों को कौन उनकी प्रतिज्ञा से विचलित कर सकता है, चाहे वे बालक हों या वृद्ध! पर अपनी आन पर मरने की उनमें समान ही शक्ति हुआ करती है।

हम्मीर सैनिकों के साथ रणांगन में चला गया और थोड़े

ही प्रयास तथा थोड़े ही शक्ति प्रदर्शन से, उसने मुंजे का सिर काटकर अजयसिंह के सामने लाकर रख दिया। अजय ने मुंजे के छिन्न मस्तक से शोणित बिन्दु लेकर हम्मीर के मस्तक पर टीका लगाते हुये कहा—मेरे प्यारे लाल! देखो चित्तौड़ की मातृ-भूमि तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। यह रक्त का टीका तुम्हारे मस्तक पर जननी जन्म-भूमि के उद्धार के लिये है।

(४)

हम्मीर की घोषणा घोषित हुई। उस घोषणा के अनुसार चित्तौड़ में तथा चित्तौड़ के आस पास बसने वाले मनुष्यों के कानों में यह सन्देश डाला गया—चित्तौड़ मेरा है चित्तौड़ के सिंहा-सन पर सदियों से मेरे पूर्वजों का राज्य रहा है! मालदेव का कोई अधिकार नहीं कि वह चित्तौड़ के पवित्र सिंहासन पर राजपूतों का वह मुकुट जिसके लिये उन्होंने अपने प्राणों की मुसकुराते हुये बलि चढ़ा दी है, अपने सिर पर धारण करे, अतः मैं चित्तौड़ में बसने वाले राजपूतों से कह रहा हूँ कि वे चित्तौड़ को छोड़कर मेरे पार्वतीय प्रदेश में बसें और चित्तौड़ के उद्धार के महाव्रत में मेरी सहायता करें। जो लोग मेरे इस आदेश को न मानेंगे वे विपत्ति में पड़ेंगे।

हम्मीर की घोषणा से सारा पार्वतीय प्रदेश राजपूतों की बस्ती से भर गया। सुदूर तक अपूर्व दृश्य ही दृश्य दिखाई देने लगा। हम्मीर ने अपनी देश-भक्ति और त्याग से सम्पूर्ण राजपूतों की नसों में मातृभूमि की भक्ति का अपूर्व खून भर दिया। सब

जननी जन्मभूमि के उद्धार के लिये आकुल हो उठे। इसी समय मालदेव ने, अपनी विधवा लड़की का विवाह हम्मीर से कपट-पूर्वक कर दिया। हम्मीर ने चित्तौड़ जाकर बालिका को ग्रहण तो कर लिया पर चित्तौड़ को देख तथा मालदेव के इस षड्यंत्र से उसका हृदय अपमान से जल उठा, स्वदेश के प्रेम की छिपी हुई आग एक साथ ही उसके हृदय में भड़क उठी। वह चित्तौड़ को विदेशियों के पंजे से मुक्त करने के लिये तैयार हो गया। उसका एक एक क्षण प्रलय के समान बीतने लगा।

उस समय चित्तौड़ की सीमा के उस पार जंगल की लड़ाकू जातियों का उपद्रव बढ़ा हुआ था। वे सब, मालदेव के राज्यान्तर्गत प्रदेशों को बुरी तरह उजाड़ रही थीं। जनता भयभीत हो रही थी—असन्तोष चारों ओर फैल रहा था। मालदेव अपने प्रबल योद्धाओं के एक दल को लेकर उन्हीं उपद्रवियों को दबाने के लिये चित्तौड़ की सीमा से बाहर गया हुआ था। इसी समय हम्मीर ने, अपने सैनिकों के साथ चित्तौड़ में प्रवेश किया। थोड़े ही प्रयास में दुर्ग पर उसका आधिपत्य हो गया। उसने चित्तौड़ी माता के पद-रज को अपने मस्तक पर लगा कर राजमुकुट को अपने शीस पर धारण किया। जब मालदेव संग्राम से लौटा तो इस सम्वाद से उसका हृदय भग्न हो गया। वह दौड़ा हुआ दिल्ली के शाह मुहम्मद खिलजी के पास गया। मुहम्मद खिलजी ने मुसलमानों की एक प्रबल सेना लेकर चित्तौड़ पर चढ़ाई कर दी।

राजपूत पहले ही से तैयार थे। वीर हम्मीर ने अपनी ओज-

स्विनी वाणी से प्रत्येक राजपूत की नसो में देशभक्ति का अमर-रस घोल दिया था । सब अपनी अपनी उन्मादिनी तलवारें म्यान से निकाल कर दुश्मन की प्रतीक्षा कर रहे थे ! भला देश-भक्ति की इस पवित्र गंगा में नहानेवाले वीरों के लिये संग्राम में 'विजय' को छोड़ कर और अन्तिम परिणाम हो ही क्या सकता था !

(५)

हम्मीर चित्तौड़ के पवित्र सिंहासन पर राजमुकुट धारण कर के बैठा हुआ था । राजपूत सर्दार, इधर-उधर बैठे हुये आपस में बातें कर रहे थे, सब के चेहरे पर विजय का उन्माद खेल रहा था । सब हृदय में असीम प्रसन्नता का भाव छिपाये हुये राणा-हम्मीर की ओर देख रहे थे । राणा ने मंत्री की ओर मुँह घुमा कर आदेश दिया—मंत्री ! बन्दी शाह को दर्बार में लाने का हुक्म दो ।

चित्तौड़ के राणा हम्मीर सिंहासन पर थे और दिल्ली का सम्राट मुहम्मद खिलजी बन्दी रूप में उनके सामने । राणा ने बन्दी से पूछा—शाह ! अब क्या विचार है ?

बन्दी ने सिर नवा कर कहा—महाराणा ! क्षमा चाहता हूँ ।

क्षमा—राणा ने हँस कर कहा—अच्छा दिल्ली के सम्राट को क्षमा ! पर मेरे इस क्षमा से ही तो रक्त बहानेवाले राजपूत सर्दारों का हृदय शान्त न होगा ! वे इसके लिये कुछ दण्ड चाहते हैं !

दण्ड ? आप मे बाहर नहीं महाराणा ! लीजिये ५० लक्ष मुद्रा और एक शत हस्ती। इसके अतिरिक्त यह वचन दे रहा हूँ कि कभी चित्तौड़ की ओर आँख उठा कर न देखूंगा।

बन्दी मुक्त हो गया ! उस समय चित्तौड़ के इस सगर्व विजय पर मेवाड़ी माता ने मुसुकुरा कर हम्मीर की पीठ ठोंक दी हम्मीर की गौरव गाथा भारत के कोने कोने में गूँज उठी।

प्रतिदान

(१)

राणा लक्षसिंह अपने सम्माननीय सर्दारों के साथ राज्य-सिंहासन पर आसीन थे। इसी समय मारवाड़ प्रदेश के राजदूतों ने राणा के समीप पहुँच कर उन्हें अभिवादन किया। राणा ने उनका यथोचित आदर सत्कार करके उन्हें उचित स्थान पर बैठाया। दूतों ने निवेदन किया—महाराज ! मारवाड़ के अधिपति रणमल अपनी राजकुमारी का कुमार चण्ड के साथ विवाह करना चाहते हैं, उन्हीं के आदेश से मैं इस परिणय-सूत्र के लिये आपके पास नारियल लेकर आया हुआ हूँ। आपकी क्या सम्मति है ?

राणा ने व्यंजक स्वर में कहा—सम्मति क्या है ! हमारे ऐसे सफेद दाढ़ी मूछ वाले बूढ़ों के लिये तो यह नारियल आ नहीं सकता। राजदर्बारी हँस उठे। मारवाड़ के राजदूत भी लज्जित हो गये। किन्तु चण्ड की आकृति पर विस्मय के भाव नाचने लगे। उसने उठकर राणा के सामने निवेदन किया—महाराज ! जिस परिणय-सम्बन्ध के लिये आये हुये नारियल का आपने मधुर हँसी के साथ स्वागत किया, उसे भला आपका बेटा चण्ड कैसे स्वीकार कर सकता है ! वह तो चण्ड के परिणय का उपहार न होकर अब आपके परिणय का उपहार हुआ।

राणा का मुख उदास हो गया। वे चण्ड के स्वभाव से भली भाँति परिचित थे। वे यह जानते थे कि चण्ड एक बार अपने मुख से कोई बात निकाल कर फिर उससे प्रलय-पर्यन्त विचलित नहीं हो सकता! और उस ओर मारवाड़ के राणा रणमल के अपमान की बात भी थी! राणा चिन्ता में पड़ गये। उन्होंने गम्भीर स्वर में चण्ड से प्रश्न किया—बेटा चण्ड! सोच कर उत्तर दो। प्रत्येक बात में आग्रह नहीं अच्छा हुआ करता।

खूब सोचकर कहा है पिताजी—चण्ड ने उत्तर दिया!

राणा ने कहा—पर इस परिणय उपहार को अस्वीकार करने के पहिले तुम्हें यह प्रतिज्ञा करनी होगी कि मैं चित्तौड़ के राज्य सिंहासन के अधिकार को सदैव के लिये त्याग रहा हूँ और उसकी मारवाड़ की राजकुमारी से पैदा हुई सन्तान ही एक मात्र स्वत्वाधिकारिणी होगी।

चण्ड आपकी इस कही हुई बात को प्रतिज्ञा रूप में दुहरा रहा है, पिता जी! मैं आजन्म इस प्रतिज्ञा का पालन करूँगा।

राणा ने नारियल अपने हाथों में ले लिया। वह परिणय उपहार सचमुच उन्हीं का परिणय-उपहार होकर रहा।

(२)

राणा ने पाँच वर्ष के बालक मुकुल के मस्तक पर राज्य का टीका लगा कर तपस्या के लिये जंगल की राह ली। चण्ड मुकुल का संरक्षक नियत हुआ। राज-काज चलने लगा। सुव्यवस्थित शासन प्रजा के सुख और सन्तोष की वृद्धि करने लगा। प्रजा

चण्ड की व्यवस्थाओं का हृदय से सम्मान करने लगी। चारों ओर उसके प्रभुत्व की प्रशंसा होने लगी। लोग स्पष्ट रूप से यह कहने लगे 'चण्ड' चित्तौड़ के कल्याण के लिये चिरायु हों। मुकुल की माता का हृदय प्रतिस्पर्द्धी हो उठा। वह चण्ड से जलने लगी। उसकी आँखों में चण्ड का यह गौरव शूल की भाँति खटकने लगा। कुछ कुचाली षडयन्त्रकारियों ने मुकुल की माता से कहा—महारानी! मुकुल का भाग्य धीरे धीरे अन्धकार में विलीन हो रहा है। आपको मालूम नहीं कि चंड अपनी इस साधुता के फन्दे में एक ऐसा फन्दा तैयार कर रहा है, जिससे राजकुमार का सर्वस्व तक लुट जायगा। इसलिये अपने कल्याण के लिये राज्यव्यवस्था अब आपको अपने हाथों में ले लेनी चाहिये।

रानी का हृदय पहले ही से कुछ सन्दिग्ध हो रहा था। उसके हृदय में पहले ही से पाप-भावना हलचल मचा रही थी! इन षडयंत्रों से वह अब और उमड़ चली। रानी अब चण्ड के प्रत्येक काम पर कड़ी दृष्टि सी रखने लगी! चण्ड से यह छिपा न रहा! रानी के इन कलुषित विचारों से उसका हृदय अपमान से मथ उठा। उसने महारानी के समीप जाकर निवेदन किया—माता आपके सन्देह को दूर करने के लिये मैं चित्तौर को हँसी खुशी से त्याग रहा हूँ। आप अब राज्यव्यवस्था अपने हाथों में लें पर आपकी सेवा में मेरा इतना नम्र निवेदन अवश्य है कि आपको कभी मेरी स्मृति की अग्नि में अवश्य दग्ध होना पड़ेगा।

चण्ड ने चित्तौड़ को प्रणाम किया। वह मान्दू राज्य में चला गया। मान्दू राजा ने उसके शौर्य और उसकी वीरता पर प्रसन्न होकर उसका सम्मान किया तथा उसे हल्लार नामक प्रदेश का अधिपति बना दिया।

(३)

चित्तौड़ में रणमल और रणमल के अनुयायी भर गये। राज्य के प्रधान प्रधान पदों पर मारवाड़ प्रदेश के व्यक्ति नियत कर दिये गये। रणमल हृदय में राज्यशासन की भावना छिपाकर चित्तौड़ के राजकोष अधिकारों पर धीरे धीरे अपना प्रभुत्व स्थापित करने लगा। जिस समय वह छोटे बालक मुकुल को गोदी में लेकर राजसिंहासन पर बैठता, उस समय उसका हृदय क्षुब्ध हो उठता। वह सोचने लगता—यही अभागा बालक मेरी सुख की दुनिया का बाधक है। यदि किसी भाँति इसका सर्वनाश हो जाय तो फिर यह सिंहासन मेरा और मैं इस सिंहासन का। तब यह दुधमुँहा बालक कर ही क्या सकता है? इसके अस्तित्व को मिटा देना तो एक साधारण सी बात है।

मुकुल अनभिज्ञ बालक था! उसके लिये सिंह और बकरी का बच्चा एक समान था। वह क्या जानता था कि जिसे मैं प्यार से नाना कह कर पुकारता हूँ उसी के हृदय में मेरे लिये हलाहल निर्माण हो रहा है। पर मुकुल की ही भाँति तो सब नादान नहीं थे। चित्तौड़ के राजपूत सर्दार रणमल की इस गति विधि को परखने में न चूके। वे यह जान गये कि रणमल अपनी सहानुभूति

के बहाने चित्तौड़ के ऊपर मारवाड़ का आधिपत्य जमाना चाहता है, पर वे विवश थे, उनमें शक्ति न थी कि वे रणमल की इस अबाधता का विरोध करते। जब चित्तौड़ की महारानी ने जान-बूझ करके मारवाड़ को अपने घर में पाल रक्खा है तो किस में शक्ति है कि वह मारवाड़ को चित्तौड़ से निकाल कर बाहर कर दे।

इसी समय चित्तौड़ में एक भयानक सम्वाद आया। इस सम्वाद से चित्तौड़ के नर-नारी काँप उठे। सब की आंखों से आंसू निकलने लगे। सब के हृदय का कोना कोना रणमल से जलने लगा। बात यह थी कि चण्ड का एक सहोदर बन्धु कैल-वारा प्रदेश में रहता था। उसका नाम रघुदेव था। वह अत्यन्त बली और योद्धा था। चित्तौड़ निवासी उसकी वीरता पर निछा-वर थे। रणमल ने धोखा देकर रघुदेव को मार डाला।

मुकुल की धात्री ने रघुदेव की मृत्यु के सम्वाद को एक दूसरे कानों से सुना। वह रणमल के हृदय में छिपी हुई भयंकर प्यास को भांप कर कई बार अपने प्यारे मुकुल को गोद में लेकर आंसू बहा चुकी थी। कई बार उसका सन्दिग्ध हृदय चित्तौड़ के भविष्य पर उद्विग्न हो चुका था। रघुदेव की मृत्यु से धात्री की आँखों में और गहरी वेदना झलक पड़ी। वह मुकुल को निहार कर महा-रानी के पास आकर रोने लगी। महारानी ने उसकी आँखों से आंसू गिरते हुये देखकर कहा—धाय! तू उदास क्यों है। तेरी आँखों से आंसू क्यों गिर रहे हैं?

धात्री ने उत्तर दिया—महाराणी ! मैं ही नहीं, इस समय चित्तौड़ के अधिकांश नर-नारी इसी प्रकार आँसू बहा रहे हैं। इस लिये नहीं कि आपका प्रभुत्व उन्हें दुखदायी बना रहा है, बल्कि इस लिये कि प्यारे मुकुल का भाग्य धीरे धीरे अन्धकार में विलीन हो रहा है। चित्तौड़ का राजसिंहासन मारवाड़ के आधिपत्य में जाता हुआ दृष्टि आ रहा है।"

महाराणी चौंक उठीं। उनके हृदय में विस्मय का असीम भाव उत्पन्न हो गया। वे धात्री से पूछने लगीं—धाय ! क्या तू यह सच कह रही है ? क्या सचमुच वे, जो मेरे टुकड़े पर पल रहे हैं, मेरे छोटे से बच्चे का सर्वनाश करने पर तुले हुये हैं ? क्या सचमुच उन्हीं के द्वारा, जिन्हें मुकुल मामा और नाना कहकर पुकारा करता है, उसके सर्वनाश का आयोजन किया जा रहा है ! तेरी इन बातों का मेरे कानों को सहसा विश्वास कैसे हो ?

विश्वास ?—धात्री ने उत्तर दिया—क्या इसके लिये प्रमाण की आवश्यकता है महाराणी ! आज सभी आँखवाले देख रहे हैं कि चित्तौड़ के प्रधान प्रधान पदों पर मारवाड़वालों का आधिपत्य है, सभी हृदय वाले यह अनुभव कर रहे हैं कि रणमल चित्तौड़ के अभिमान में आग लगा कर मारवाड़ के गौरव को बढ़ा रहा है ! रघुदेव की मृत्यु का षड्यंत्र क्या है महाराणी ! क्या इस भयंकर घटना से भी आपने इस उलझी हुई पहेली का अर्थ न समझा ? ओह ! कभी कभी अधिक विश्वास भी घातक और जहरीला सिद्ध होता है।

(४)

महाराणी चिन्तामग्न बैठी हुई थीं। कुछ विश्वस्त सर्दार भी उनके समीप चिन्तामग्न उदासभाव से बैठे हुये थे। सबका मन, उदास था। महाराणी ने उदासी को भंग करते हुये कहा—सर्दारो! रणमल का विश्वासघात असहनीय हो रहा है। मैंने अपने विश्वास की रक्षा करके धोखा खाया। मैं जब अपनी आंखें पसार कर अपने चारों ओर देखती हूं मुझे अन्धकार ही अन्धकार दृष्टि आता है। मैं स्वाधीन होकर के भी धीरे धीरे पराधीनता के बन्धन में जकड़ी जा रही हूँ। यदि माया का यह अभिनय कुछ दिनों तक इसी प्रकार चलता रहा तो इसमें सन्देह नहीं कि सिसौदिया वंश का गौरव मिट जायगा और उसके मिटाने के कलंक का टीका मेरे ही सिर पर लगेगा।

महाराणी चुप हो गईं। एक सर्दार ने उठकर निवेदन किया—महाराणी! यह चिन्ता करने का समय नहीं! पानी की लहरों पर लाठी मारने से कोई लाभ न होगा। अब तो हम लोगों को चित्तौड़ के उद्धार के लिये मिल कर गुप्त रूप से प्रयत्न करना चाहिये।

महाराणी ने उत्तर दिया—सर्दार! मेरा हृदय दग्ध हो रहा है—सचमुच उस त्यागी वीर की स्मृति आज मुझे रुला रही है, सचमुच उसका वियोग पुत्र-वत्सला माता के हृदय को जला रहा है। ओह! जब वह अपने प्यारे चित्तौड़ को छोड़कर जाने लगा था तो उसकी आँखों में आंसू थे, हृदय में वेदना थी। पर

हाय ! मैं उन आँसुओं का उस समय कुछ भी रहस्य न समझ सकी। सर्दार ! देशभक्ति से मतवाले चण्ड की आंखों के वे आंसू—आँसू नहीं, कलेजे के टुकड़े थे। वह अपने हृदय को टुकड़े टुकड़े कर आँखों में आँसू के रूप में अवतरित कर बड़ी विनम्रता से चिल्ला कर कह रहा था—मा ! मैं निरपराध हूँ। मुझ पर कलंक न लगाओ। वह मार्मिक रहस्य अब मेरी समझ में आया सर्दार ! पर क्या मेरे उस अपमान से वह अपने प्यारे चित्तौड़ को भूल जायगा ! क्या वह अपनी आँखों से चित्तौड़ी माता को मारवाड़वालों के पंजे में आग्रस्त होते हुये देख सकेगा ? नहीं, वह वीर है। उसका मन देशभक्ति की गंगा की हिलोरों में सदैव क्रीड़ा करता रहता है। सर्दार ! शीघ्र चण्ड के पास चित्तौड़ की इस महा विपत्ति का सम्वाद भेजो।" वह अपने प्राणों को जांखों में डाल कर के भी अपने प्यारे मुकुल की रक्षा करेगा।"

चण्ड के पास दूत भेज दिया गया। चण्ड ने महाराणी के सम्वाद का स्वागत करते हुये दूत से कहा—चण्ड चित्तौड़ का है ! और चित्तौड़ चण्ड का ! चित्तौड़ के राणा मुकुल की सेवा के लिये, चण्ड प्रति क्षण अपने प्राणों को हथेली पर लिये तैयार रहता है ! इतने दूर बसने पर भी प्यारे चित्तौड़ की स्मृति मुझे रुलाती है, उसके पवित्र रज-कण मुझे मुग्ध करते हैं। दूत ! जाकर महाराणी से मेरा सन्देश कहना—चित्तौड़ के समीपस्थ गांवों के मनुष्यों को वे अभी से भोजन और वस्त्र देना आरम्भ कर

दें ! अपनी शक्तियों के अनुसार जितने मनुष्यों को वे भोजन और वस्त्र दे सकें दें और दीपावली के महोत्सव के दिन मुकुल गोसुन्द नगर में उपस्थित हो। यदि महाराणी गुप्त रूप से मेरे बताये हुये इस कार्य को यथासमय पर पूरा कर देंगी तो रण-मल में शक्ति नहीं कि वह चित्तौड़ के पवित्र राज-मुकुट को अपने शीस पर धारण कर सके।

दूत लौट कर चित्तोड़ गया। चण्ड को चित्तौड़ के उद्धार की चिन्ता उद्विग्न करने लगी।

(६)

गम्भीर रात्रि का समय था, जन-शून्य पार्वतीय प्रदेश के स्थान में चण्ड ने अपने एक सहस्र भील अनुचरों के सामने प्रस्ताव रखते हुये कहा—वीरों ! रणमल की आंखें इस समय प्यारे चित्तौड़ के दुर्ग की ओर लगी हुई हैं। वह चित्तोड़ के राणा मुकुल का सर्वनाश कर स्वयं महाराणा बनने का सुख-स्वप्न देख रहा है। मेरी आज्ञा है, तुम सब लोग इसी समय गुप्त वेश में चित्तौड़ के लिये प्रस्थान कर दो। वहां पहुंचने पर यदि किसी को आशंका हो तो यह उत्तर देना कि हम लोग अपने बाल-बच्चों से मिलने के लिये ही चित्तौड़ में आये हुये हैं। दीपावली के महो-त्सव के दिन, अमावस्या की गम्भीर रात्रि में मेरा रणमल के ऊपर आक्रमण होगा। उस समय तुम लोग भी चित्तौड़ के भीतर से मेरे आक्रमण में सहायता पहुँचाना।

एक सहस्र भीलों का दल चित्तौड़ के लिये रवाना हो गया

और चित्तौड़ पहुँच कर दीपावली महोत्सव के दिन की प्रतीक्षा करने लगा।

दीपावली महोत्सव के दिन की अन्धकारमयी रजनी। मुकुल गोसुन्द नगर में अधिक देर तक चण्ड की प्रतीक्षा करके उदास हो गया। उसका मन दुःख से भर गया। वह हृदय में असीम वेदना का भार लेकर धीरे धीरे अपने घोड़े पर लौट रहा था। इसी समय उसके कानों में पीछे से आते हुये घोड़ों की टाप के शब्द सुन पड़े। वह खड़ा हो गया। चण्ड ने अपने थोड़े से सर्दारों के साथ मुकुल के पास पहुँच कर कहा—प्यारे मुकुल! क्या तुम यह जान गये थे कि चण्ड अपनी प्रतिज्ञा को छोड़ कर प्यारे चित्तौड़ को भूल बैठेगा! यदि हाँ, तो तुमने पाप किया! देखो, चण्ड तुम्हारे सामने हथेली पर प्राणों का उपहार लेकर खड़ा हुआ है! क्या तुम नहीं देख रहे हो कि इन प्राणों के पहलू पहलू में चित्तौड़ का प्यार भरा हुआ है। अच्छा अब आदेश दो।

मुकुल चण्ड के मुख की ओर देखने लगा। चण्ड ने प्यार से उसका मस्तक चूम लिया।

(७)

चित्तौड़ के विलास-भवन में रणमल ने शराब के नशे में उस सुन्दरी की ओर हाथ बढ़ाया। वह मुकुल के जननी की सहचरी थी। उसने हाथ का झिटका देकर रणमल को गिरा दिया, रणमल पलँग पर अचेत होकर गिर पड़ा। सुन्दरी ने पलँग की

डोरी से उसके हाथ पैर बाँध दिये। वह बन्दी रूप में वहीं बेहोश पड़ा रहा।

निस्तब्ध निशा का समय था। चित्तौड़ का सारा जनसमूह महा निद्रा के प्रवाह में बह रहा था। पर एक सहस्र भीलों की आंखों में नींद नहीं। वे एक स्थान पर एकत्र होकर, इस सतर्कता से बैठे हुये थे, मानों किसी की प्रतीक्षा कर रहे हों! इसी समय एक ओर से हर हर महादेव का नाद सुन पड़ा। उन एक सहस्र वीरों ने भी उसमें योग दिया। तलवारें म्यानों से कढ़ गईं, आकाश चमक उठा, पृथ्वी कम्पित हो गई, चण्ड अपने वीर सैनिकों के साथ आगे बढ़ता हुआ चित्तौड़ के दुर्ग में घुस गया।

रणमल ने चण्ड के महाहुंकार को सुन कर आंखें खोल दीं और दांतों को निकाल उसी बन्दी रूप में वह कायरों की भाँति हँसने लगा। इसी समय एक सनसनाती हुई गोली आई और उसकी इस कायर हँसी को सदा के लिये बन्द कर के चली गई।

चित्तौड़ पर मुकुल का एकमात्र आधिपत्य हो गया। चण्ड ने अपनी विमाता के पास पहुंच कर उनके चरणों की धूलि मस्तक पर लगाई। माता ने हँस कर कहा—बेटा चण्ड! तुम्हारे इस प्रतिदान की स्मृति, चित्तौड़ के हृदय में प्रलयकाल तक बनी रहेगी।

राज्य लोभ

(१)

सन्यासिनी की कुटी में पहुँच कर चारों राजकुमार बैठ गये। पृथ्वीराज ने निवेदन किया—देवि ! हम चित्तौड़ अधीश्वर रायमल के पुत्र हैं। आपके पास इसलिये आये हुए हैं कि आप अपनी साधना शक्ति से यह बता दें कि हम में से कौन राजसत्ता का अधिकारी होने के योग्य है ?

सन्यासिनी कुछ देर तक शान्त रही। फिर उसने उँगली से सांगा की ओर संकेत किया। पृथ्वीराज का चेहरा लाल हो उठा। उनकी उग्र प्रवृत्ति आँखों में नाचने लगी। वे म्यान से तलवार निकाल कर खड़े हो गये। उनकी तलवार सांगा के सिर पर गिरना ही चाहती थी कि सूर्यमल ने आगे बढ़कर उसे अपने तीखे शस्त्र पर रोक लिया। वार खाली गया, हृदय में क्रोध उबल पड़ा।

तलवारें बजने लगीं। खून की धारा बह चली। राजकुमारों के शरीर में एक दूसरे के प्रहार से अनेकों घाव होगये। शरीर लाल पर्वत की भाँति शोणित का स्रोत उगलने लगा। सन्यासिनी भाग चली। पृथ्वीराज आघात से आहत हो गये, साँगा की एक आँख जाती रही। वे भी अवसर पा निकल गये।

यह शिवान्ति प्रदेश का एक वीर राजपूत था। उसका नाम

बीदा था। यह विदेश जाने के संकल्प से सुसज्जित होकर अपने गृह द्वार पर खड़ा था। इसी समय रक्तरंजित साँगा ने पहुंच कर उससे आश्रय की भीख मांगी। भला वीर राजपूत किसी आश्रय मांगने वाले को कब निराश करते हैं! उसने साँगा को अभय करते हुये कहा—चिन्ता नहीं मैं अपने प्राणों को लुटा करके भी तुम्हारे शरीर की रक्षा करूँगा। बात समाप्त भी न होने पाई थी कि साँगा के पीछे दौड़कर आता हुआ जयमल तलवार निकाल कर बीदा के सामने खड़ा हो गया।

बीदा ने काल के अवतार जयमल को, हाथ में चमकती हुई तलवार लिये हुये सामने देख कर कहा—क्यों! तुम क्या चाहते हो? तुम्हारी यह तलवार किसके रुधिर की प्यासी हो रही है?

"तुम नहीं जानते। जयमल ने गर्ज कर उत्तर दिया—जिसे तुमने अपने आश्रय की ओट में छिपाया है, उसी साँगा के रुधिर का पान करने के लिये इस समय मेरी तलवार आकुल हो रही है, बेचैन हो रही है।

बीदा ने कहा—तुम जानते हो कि एक वीर राजपूत ने उसे आश्रय दिया है। इसलिये साँगा का रुधिर पान करने के पहिले तुम्हारी तलवार को उसके आश्रयदाता का रुधिर पान करना होगा।

चिन्ता नहीं—जयमल ने क्रोध के स्वर में उत्तर दिया।

जयमल की तलवार चमक उठी। बीदा ने भी म्यान से अपनी लपलपाती हुई तलवार खींच ली। दोनों एक दूसरे से मिल गईं।

झन-झन और खन-खन का शब्द निकल कर आकाश को गुंजित करने लगा। बीदा की तलवार ने जयमल को आहत कर दिया। पर जयमल की तलवार पहले ही बीदा की गर्दन पर पहुँच चुकी थी। बीदा का सिर भूमि पर गिर पड़ा। उसने बड़ी विचित्र मुसुकराहट के साथ यह कह कर अपनी लीला समाप्त कर दी कि जयमल! विजय मेरी ही रही! देखो मेरा आश्रित अब भी तुम्हारे आहत शरीर के सामने हँसता हुआ खड़ा है।'

(२)

रायमल के क्रोध की सीमा नहीं थी। साँगा का अब तक कुछ पता न चला। रायमल ने पृथ्वीराज को अपने पास बुला कर कहा—पृथ्वीराज! तुम्हारे ही आक्रमण के कारण साँगा भाग गया। उसका अब तक कुछ पता नहीं चला। पता नहीं वह जीता है या मर गया। अतः तुम्हारे इस अपराध को सहन करना मेरी भी शक्ति के बाहर है! मैं तुम्हें आदेश दे रहा हूँ कि तुम अपने इस पाप के प्रायश्चित्त स्वरूप इसी समय मेवाड़ को छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर चले जाओ।

पृथ्वीराज वीर थे। उनकी रग रग में स्वाभिमान भरा हुआ था। उन्होंने अपने पिता के इस आदेश को शिर पर धारण किया। वे अपने केवल पाँच अनुचरों के साथ मेवाड़ को छोड़कर गढ़वारा प्रान्त के अन्तर्गत नदालय नामक नगर में चले गये।

उस समय गढ़वारा प्रान्त के ऊपर मीन जाति का आधिपत्य था। रावत की उपाधि धारण कर एक मनुष्य नदालय नगर को

अपनी राजधानी बनाकर राज्य कर रहा था। पृथ्वीराज अपने सहचरों के साथ मीन नृपति के पास गये और उसके अनुचरों में सम्मिलित हो गये।

पृथ्वीराज अनुचर तो थे, पर उनके हृदय के भीतर मीन नृपति के ऊपर अधिकार जमाने की गहरी लालसा काम कर रही थी। वे उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में बड़ी सतर्कता से बैठे हुये थे। मीन राज्य में प्रति वर्ष अहेरिया उत्सव मनाया जाता था। इस उत्सव के दिन राजाज्ञा से राजा के अनुचरों को छुट्टी दी जाती थी। अनुचर उस दिन अपने कुटुम्बियों से मिलते और उनमें आनन्द मनाया करते थे।

उस दिन इसी अहेरिया उत्सव का दिन था। मीन-राज्य के सभी सैनिक सामन्त आनन्द में क्रीड़ा कर रहे थे। गुप्तवेशी पृथ्वीराज ने अपने वीर सहचरों से मिलकर उन्हें आदेश देते हुये कहा—बहादुरो! आज का दिन हमलोगों की अभिलाषा की पूर्ति का दिन है। इसलिये तुम लोग आनन्द क्रीड़ा में व्यस्त मीन नृपति के ऊपर आक्रमण करो। चण्डी माता की यदि कृपा हुई तो सिंहासन पर अवश्य ही मेरा स्वत्व स्थापित हो जायगा।

आज्ञा की देर थी। पृथ्वीराज के वीर सहचर एक ओर से सिंह की भाँति मीन नृपति की आनन्द-मण्डली पर टूट पड़े। हलचल मच गई। लोग इधर उधर भागने लगे। मीन नृपति ने भाग कर प्राण बचाना चाहा। पृथ्वीराज ने उसे घेर कर मार

डाला। नगर पर पृथ्वीराज का सम्पूर्ण अधिकार हो गया। उनके वीर सहचरों ने अपनी विजय पताका फहरा कर चित्तौड़ के जयजयकार से आकाश तक को गुंजा दिया।

(३)

रायमल उदास भाव से बैठे हुये हैं। उनके मुख पर चिन्ता झलक रही है। मेवाड़ की दुर्दशा से उनकी आँखें सजल हो आई हैं। वे सोच रहे हैं, जयमल ताराबाई की प्राप्ति की अधम चेष्टा में मारा गया। सांगा भाग गया। कई वर्ष बीत जाने पर भी उसका कुछ पता नहीं चल रहा है और पृथ्वीराज मीन देश पर अपना आधिपत्य जमा कर शासन कर रहा है। उसे भी प्यारे मेवाड़ की चिन्ता नहीं। तो क्या चित्तौड़ के पवित्र सिंहासन पर दुश्मनों का अधिकार हो जायगा! नहीं, अपने जीते जी ऐसा न होने दूंगा। जिस पवित्र राज-मुकुट के लिये मेरे पूर्वजों ने अपना रक्त बहाया है, उसे विजातियों के द्वारा कलंकित न होने दूंगा। एक बार इस बुढ़ाई में भी उसके लिये अपनी तलवार बिजली की भाँति चमका कर उसी के हित की कामना में अपना जीवन उत्सर्ग कर दूंगा। पर पहले पृथ्वीराज को बुलाने के लिये सन्देश भेजूँ। उसे चित्तौड़ की स्मृति अवश्य ही यहाँ पर खींच लायेगी।"

खूब! इसी को भाग्य कहते हैं! अब मेवाड़ के राज्यसिंहासन का अधिकारी, मुझे छोड़ कर कौन होगा! सचमुच शुभ रूप से मेरी आँखों के सामने मेवाड़ का राजमुकुट लोट रहा है। बस,

अब केवल थोड़े ही दिनों की देर है। वह अवश्य मेरे शीस पर सुशोभित होगा। किसमें साहस है, किसमें शक्ति है कि मुझे मेवाड़ के राजमुकुट से वंचित रखे। मेवाड़ के अन्दर तो इस समय ऐसा कोई वीर नजर नहीं आता। रायमल बूढ़े हो चले हैं। सांगा भाग कर छिप गया है। जयमल मारा जा चुका है। रहा पृथ्वीराज, उसे चित्तौड़ की चिन्ता ही नहीं ! एक कमरे में बैठा हुआ ऊदा का पुत्र सूर्यमल बड़ी तन्मयता से यही सोच रहा था। रह रह कर उसकी आँखों में हर्ष का उन्माद नाच रहा था। इसी समय सूर्यमल के एक अनुचर ने सूर्यमल के पास पहुँच कर निवेदन किया—महाराज ! रायमल ने पृथ्वीराज को बुला लिया। तोड़ा टङ्का के अधीश्वर की प्रतिज्ञानुसार यवनों की महती सेना पर विजय प्राप्त कर ताराबाई के साथ वे चित्तौड़ में लौटे हैं। मैंने सुना है राणा रायमल ने उनकी इस वीरता पर प्रसन्न होकर उनके प्राचीन अपराधों को क्षमा कर दिया है।

सूर्यमल स्तब्ध हो गया। उसकी आशा का दुर्ग उसकी आँखों के सामने ही ढहने लगा। जिस सुख-संसार का वह स्वप्न देख रहा था, वह पृथ्वीराज के आगमन से भंग सा हो गया। उसने कुछ देर सोच कर फिर आवेश के स्वर में अनुचर से कहा—कोई चिन्ता नहीं, मेवाड़ की राजभूमि पर मेरा भी तो अधिकार है। यदि पृथ्वीराज चित्तौड़ के वर्तमान अधीश्वर रायमल का पुत्र है तो मैं भी तो चित्तौड़ के राणा रायमल के भाई ऊदा का

पुत्र हूँ। अतः अब मैं अपने अधिकार के लिये स्पष्ट रूप से बगा-वत करूँगा। जाओ, तुम भाई सारंगदेव को बुला लाओ।

अनुचर चला गया। सूर्यमल सोचने लगा—पृथ्वीराज वीर है, लड़ाका है। आशा नहीं कि उसकी शक्तियों के सामने मेरी कामना सफल हो। पर यह क्यों? जिस राजपूती रक्त का संचार पृथ्वीराज की नसों में हो रहा है, वही मेरी भी नसों में तो है! जिस मेवाड़ के पवित्र रज में लोट कर वह शक्तिवान बना है उसी रज का प्रभाव तो मेरे शरीर में भी घुसा है! फिर मैं इस अधिकार की लड़ाई में पृथ्वीराज से क्यों डरूँ? उससे क्यों निराश होऊँ?

सूर्यमल सोच ही रहा था। इसी समय सारंगदेव आपहुँचा। सूर्यमल ने सारंगदेव को सम्मानपूर्वक बैठाते हुये कहा—भाई चित्तौड़ के राज-सिंहासन से तो अब हम लोगों का अधिकार जाना चाहता है। पृथ्वीराज उस पर स्वत्त्व जमा कर उसका एकमात्र अधिकारी बनना चाहता है! क्या रगों में राजपूती रक्त रहते हुये हम लोग कायरता-पूर्वक अपने जन्मसिद्ध स्वत्व को दूसरों के हाथों में जाते हुये देख सकते हैं?

सारङ्गदेव ने गर्ज कर उत्तर दिया—नहीं, भाई सूर्यमल! अधिकार हड़पने के पहिले पृथ्वीराज को शोणित के रूप में उसका मूल्य चुकाना होगा! यदि वह मूल्य चुकाने में बाजी मार ले जायगा तो इसमें सन्देह नहीं कि वही चित्तौड़ का एकमात्र शासक होगा। चलो, मालवाधिपति मुजफ्फर से सहायता माँग

कर चित्तौड़ पर आक्रमण करें। हम लोगों के सम्मिलित आक्रमण को चित्तौड़ सम्हाल सकेगा, इसमें सन्देह है!

(४)

विस्तृत भूमिखण्ड में दोनों ओर की सेनायें आमने सामने डटी हुई हैं। एक ओर रायमल अपने सहस्र वीर योद्धाओं के साथ बिजली की भाँति अपनी तलवार चमका रहे हैं और दूसरी ओर सारङ्गदेव, सूर्यमल और मुजफ्फर की उन्मादिनी सेना अग्निफुंकार छोड़ रही है। दोनों, एक दूसरे का प्राण-पण से विनाश करने में लगी हुई हैं। रायमल थक गये। उनका सारा शरीर क्षत विक्षत हो गया। वे मैदान में निर्जीव होकर गिर पड़े। राजपूतों का मुख मलीन हो गया। दुश्मनों ने हर्ष-उन्माद में विजय का धौंसा बजा दिया।

एक क्षण भी न बीतने पाया था कि सारा आकाश गंभीर नाद से गूँज उठा। वीर पृथ्वीराज ने अपने एक सहस्र सैनिकों के साथ पहुंच कर शत्रु-दल में भयंकर उत्पात सा मचा दिया। तलवारें चमकने लगीं! मुण्ड कट कर बरसने लगे। चारों ओर हाहाकार सा मच गया। पृथ्वीराज ने अपने विपुल शौर्य से थोड़ी ही देर में असंख्य शत्रुओं का विनाश कर दिया। इसी समय सन्ध्या हो आई और युद्ध दूसरे दिन के लिये स्थगित हो गया।

शत्रुदल का शिविर था। सूर्यमल आहत होकर पलँग पर पड़ा था। एक अनुचर उसके आघातों की मरहम पट्टी कर रहा था।

इसी समय पृथ्वीराज ने सूर्यमल के शिविर में प्रवेश किया। अपने प्रबल शत्रु पृथ्वीराज को सामने देख कर सूर्यमल शय्या त्याग कर खड़ा हो गया और उसे आदर सम्मान से उचित आसन पर बैठाया। शय्या त्याग के कष्ट से सूर्यमल के शरीर का घाव खुल गया, रक्त की धारा बह चली।

सूर्यमल के शरीर से रक्त का झरना बहते हुये देख कर पृथ्वीराज की आत्मा दुख से काँप उठी। वे अपने चाचा सूर्यमल से पूछने लगे—आपके शरीर में अनेकों घाव लगे हुये हैं, क्या आपने इनके उपशमन का कोई उपाय नहीं किया?

सूर्यमल—वत्स! तुम्हें देख कर मेरा हृदय आनन्द से पुलकित हो उठा। मुझे ऐसा ज्ञात हो रहा है कि इस समय मेरे शरीर में रंचमात्र भी पीड़ा नहीं और मैं पूर्णरूप से स्वस्थ सा हूँ।

पृथ्वीराज—चाचा! मुझे भूख लग रही है। क्या कुछ खाने का प्रबन्ध हो सकता है?

"क्यों नहीं"—सूर्यमल ने कहकर अनुचर को भोजन तैयार करने के लिये आदेश दिया। भोजन शीघ्र तैयार हो गया। दोनों प्रतिद्वन्द्वी प्रेमभाव से खाना खाने के लिये बैठ गये। खाना खा चुकने पर पृथ्वीराज ने विदा मांगते हुये सूर्यमल से कहा:—कल हम लोग पुनः प्रतिद्वन्दी भाव से युद्धक्षेत्र में अवतीर्ण होंगे। अब कल का युद्ध ही अन्तिम युद्ध होगा।

हाँ ठीक है बेटा—सूर्यमल ने उत्तर दिया—कल का युद्ध

हमारा तुम्हारा अन्तिम युद्ध होगा।

पृथ्वीराज चले गये। सूर्यमल फिर अपने घावों की मरहम पट्टी करने लगा।

(५)

दूसरे दिन प्रभातकाल में ज्योंही पक्षियों ने अपने मधुर-संगीत से संसार के हृदय में आनन्द का संचार किया। त्योंही दोनों ओर के सैनिक सूर्यदेव की हँसती हुई किरणों को प्रणाम कर एक दूसरे से भिड़ गये। युद्ध होने लगा। रक्त की नदियां बह चलीं। सारंगदेव मैदान में अपना रण-नैपुण्य दिखाकर घायल हो गया। सूर्यमल पराजित होकर अपने घायल अनुचरों के साथ भाग गया। पृथ्वीराज की सेना ने अपनी विजय का डंका बजाकर आकाश को निनादित कर दिया।

रात्रि का समय था। लता-गुल्मों से घिरे हुए वन-प्रान्त के सघन कुंज में सूर्यमल अपने सहचर सारङ्गदेव के साथ अग्नि-कुण्ड के पास बैठा हुआ बातें कर रहा था। इसी समय वीर केसरी पृथ्वीराज ने वहां पहुँच कर अपनी तलवार म्यान से निकाल ली। सूर्यमल न उठा। वह सारंगदेव के साथ उसी प्रकार बातें करता रहा। पृथ्वीराज के आश्चर्य की सीमा नहीं थी। उन्होंने सूर्यमल से कहा—चाचा! अपने प्रबल प्रतिद्वन्द्वी पृथ्वीराज को सामने हाथ में तलवार लिये हुये खड़ा देखकर आप इस प्रकार निश्चिन्त होकर क्यों बैठे हुये हैं? दुश्मन की यह तलवार आपके शिर पर वार कर उठे तो?

सूर्यमल ने उत्तर दिया—चिन्ता नहीं वत्स ! मेरे मरने से कोई क्षति न होगी। पर तुम्हारी मृत्यु से तो सारा चित्तौड़ सूना हो जायगा।

पृथ्वीराज लज्जित हो गये। उनकी निकली हुई तलवार ने म्यान में मुँह छिपा लिया। दोनों एक दूसरे को प्रेमपूर्वक भेंटने लगे। इस भेंट में उन दोनों को कितना आनन्द आया होगा यह तो उनके हृदयों ने ही जाना होगा।
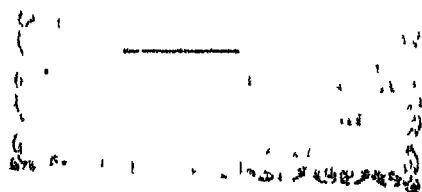
उत्सर्ग

(१)

शुभ्र आकाश पर मेघ के काले काले खण्ड दिखाई देने लगे। राणा विक्रमाजीत ने चित्तौड़ के राज्य-सिंहासन पर बैठ कर आदेश दिया—चित्तोड़ के राजपूत सर्दारों को जितनी उपाधियाँ दी जा चुकी हैं, जितने सम्मानपत्र बख्शे गये हैं, जितनी जागीरें उपहार स्वरूप में दी गई हैं, वे अधिक हैं। अतः मेरे इस आदेश के अनुसार उनकी जागीरें ज़ब्त कर ली जाँय, उनकी उपाधियाँ लौटा ली जाँय तथा उनका सम्मान भी कम कर दिया जाय और राज्य-कोष के लिये प्रजा से कुछ अधिक कर वसूल किया जाय।

मंत्री ने निवेदन किया—पर महाराज! अब तक चित्तौड़ में कभी ऐसा नहीं हुआ था! किसी भी राणा के शासन-काल में दी हुई उपाधियाँ और जागीरें नहीं लौटाई गई थीं! आप जानते हैं कि ये जागीरें उन्हें अपने प्राणों के बदले में ही मिली हैं। उनके बाप-दादों ने अपने सुख-दुख की तनिक भी परवाह न कर अपने प्यारे चित्तौड़ के लिये अपना सब कुछ उत्सर्ग कर दिया है, तो क्या चित्तौड़ के राणा की आँखों में उसका मूल्य कुछ नहीं?

राणा ने उत्तर दिया—मूल्य अवश्य है पर सम्मान

उतना ही अच्छा होता है, जहाँ तक शोभा देता है। किसी मनुष्य को सम्मान के पर्वत पर चढ़ा देना भी तो अनुचित है। मैं देखता हूं, मेरे पूर्ववर्ती राजाओं ने, इस सम्बन्ध में बड़ी अनुभव-हीनता से काम लिया है। उन लोगों ने देश का अधिक भू-भाग सैनिक सर्दारों में बाँट कर देश को बर्बाद सा कर दिया है। मैं, अपने शासनकाल में उन नियमों का पालन करने के लिये बाध्य नहीं! यदि मैं समस्त राजपूत सर्दारों को, भेंट में दी हुई जागीरें उनसे छीन लूँ और इसके बदले में उन्हें जीवन-निर्वाह के लिये कुछ व्यय दिया करूँ तो इसमें सन्देह नहीं कि मेरे राज्य-कोष की कमी पूरी हो जाय।

मंत्री ने कहा—आप भूल रहे हैं महाराज! चित्तौड़ के राजपूत सर्दार चित्तौड़ के प्राण हैं, जीवन हैं। जब जब चित्तौड़ के ऊपर विदेशियों ने आक्रमण किया है, तब तब चित्तौड़ के राजपूत सर्दारों ने ही अमर स्वाधीनता का प्याला पीकर मातृभूमि की वेदी पर अपना शीस चढ़ाया है। पर दुख है महाराज आपकी दृष्टि में उस अमर बलिदान का कुछ भी मूल्य ही नहीं!

राणा की आँखों में क्रोध नाचने लगा। भौहें टेढ़ी हो गईं। मस्तक पर दो तीन रेखायें भी थोड़ी देर के लिये झलक उठीं। कुछ देर तक चुप रह कर राणा ने उत्तर दिया—मंत्री! शासन के सम्बन्ध में मेरा आदेश अधिक मूल्य रखता है न कि तुम्हारा। इसलिये मेरी आज्ञा है कि मेरा यह आदेश शीघ्र ही प्रजा के

कानों तक पहुँचा दिया जाय !

हाँ यह ठीक है महाराज—मंत्री ने उत्तर दिया—पर यह भी ठीक है कि मंत्री भी शासन के सम्बन्ध में अपने कर्त्तव्य पालन में नहीं चूकता। जब कभी राजा भूल से अन्याय-मार्ग पर पैर रखता है तो अपने धर्म और अपने कर्त्तव्य की प्रेरणा से मन्त्री उसे रोकता है, उसे सावधान करता है। मैं देखता हूँ, इस समय सारा चित्तौड़ अशान्ति की वेदी पर बैठ कर महा-क्रान्ति का राग अलाप रहा है। चारों ओर से विप्लव की एक भयंकर आँधी उठती हुई नजर आ रही है। राज्य की सीमा पर पार्वतीय प्रदेश की जातियों का भयङ्कर उपद्रव बढ़ रहा है। प्रजा उसके उपद्रवों से त्रस्त होकर अन्य प्रदेशों को भागी जा रही है ! यही क्यों ? चित्तौड़ के अन्तःपुर में भी तो कलह की एक भयङ्कर आग लगती हुई दिखाई दे रही है ! मीरा को विष देने का षड्यन्त्र क्या प्रजा के कानों में नहीं पहुँच सका है ? क्या प्रजा, इसे उसी दृष्टि से देखती है, जिससे महाराज देखते हैं ! महाराज ! आप देखें या न देखें पर मैं तो यह प्रत्यक्ष रूप से देख रहा हूँ कि महा-पतन चित्तौड़ के आगे पीछे चक्कर लगा रहा है।"

राणा ने क्रोध के स्वर में उत्तर दिया—मन्त्री ! जानते हो, तुमअपनी अधिकार-सीमा से आगे बढ़े जा रहे हो ! यदि अब भी मुँह बन्द न करोगे तो तुम्हें इस अपराध में दण्ड भुगतना पड़ेगा।

मंत्री चुप हो गया। उसके मुख से जो अंतिम शब्द निकला,

वह था मंत्री-पद-त्याग । राणा ने उसे स्वीकार कर अपना आदेश-पत्र सैनिकों में बाँट दिया !

(२)

गुजरात के बादशाह बहादुर के हृदय में, बहुत दिनों से एक चिन्ता उथल-पुथल मचा रही थी। वह न तो सुख की नींद सोता था और न चैन से भोजन करता था। दिन रात सोचा करता था—चित्तौड़ के राणा पृथ्वीराज ने मेरे पूर्वज मुजफ्फर को बन्दी कर लिया था, गुजरात के शाही वंश के लिये यह बड़े कलंक की बात है। अतः किसी भाँति इस कलंक के टीके को शाही वंश के मस्तक से छुड़ाना होगा—चित्तौड़ को विध्वंस कर इस भयानक अपमान के बदले को चुकाना होगा !

बहादुर इसी चिन्ता में दुबला हो रहा था। वह अपनी सैनिक शक्ति का संगठन कर अवसर की प्रतीक्षा में था। इसी समय बहादुर के कानों में सम्वाद पहुँचा—इस समय सारा चित्तौड़ अस्त-व्यस्त है। राणा विक्रमाजीत के कटु व्यवहारों के कारण चित्तौड़ के अन्तःपुर में आग लगी हुई है। राजपूत सैनिक उससे असन्तुष्ट होकर उसके विनाश के दिन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। बहादुर के हर्ष की सीमा न रही। वह इतने दिनों से जिस समय की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा था वही उसकी आँखों के सामने नाचने लगा। उसने अपने मंत्री को बुला कर कहा—मंत्री ! बहुत दिनों से जो कसक कलेजे में छिपी थी वह आज पूरी होती हुई दिखाई दे रही है। मैंने सुना है,

चित्तौड़ की अवस्था इस समय अत्यन्त बुरी है, राजपूत सर्दार आपस में ही एक दूसरे को देख कर जलते हैं—इसलिये चित्तौड़ के राणा से बदला चुकाने के लिये इससे बढ़ कर अब कोई दूसरा अवसर हाथ न लगेगा। बस, कल ही सेना तैयार कर चित्तौड़ पर आक्रमण कर दिया जाय!

मंत्री ने बहादुर की आज्ञा का स्वागत किया।

बहादुर की सेना तैयार हो गई। जंग का धौंसा बजा दिया गया। यवन सैनिकों का हृदय आवेश से काँप रहा था। उनकी उन्मादिनी तलवार, राजपूतों का रुधिर पान करने के लिये लप-लपा रही थी! तीव्र धार वाले बर्छे राजपूतों को आकाश पर फेंकने के लिये उत्सुक से हो रहे थे! उनके हाथ, रण-स्थल में चित्तौड़ी वीरों की गर्दनें उड़ा देने के लिये लालायित हो रहे थे, उनके पैर बड़े जोरों से चित्तौड़ की ओर बढ़े जा रहे थे। बहादुर ने अपने इन पागल सैनिकों के साथ लैचा नामक स्थान में पहुंच कर डेरा डाल दिया!

राणा बिक्रमाजीत के कानों में खबर पड़ी। उनकी आत्मा तिलमिला उठी। वे अपने विश्वासी सैनिकों के साथ बहादुर की उन्मादिनी सेना से भिड़ गये। संग्राम आरम्भ हो गया। रक्त की धारायें बह चलीं। मुण्ड पर मुण्ड कटने लगे। पर बहादुर की विपुल वाहिनी के आगे बिक्रमाजीत की कुछ न चली। वह निराश हो गया। उसकी निराशा को देख कर, चित्तौड़ी माता के हृदय में ऐसी वेदना उत्पन्न हुई कि सारा

चित्तौड़ जाग उठा ! बच्चे बच्चे के हृदय में स्वाभिमान की आग धधक उठी । जिसे लोग कहते हैं, मातृभूमि का आह्वान !!

(३)

बहादुर का आतंक धीरे धीरे चित्तौड़ में बढ़ रहा था। राणा विक्रमाजीत की निराशा को देख कर चित्तौड़ी प्रजा असह्य वेदना का अनुभव कर रही थी । राजपूत सैनिक उदास होकर स्वाधीनता की रक्षा के लिये ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे। इसी समय समस्त चित्तौड़ के अन्दर एक नवीन जागृति दौड़ पड़ी। मेवाड़ की सीमा के अन्दर रहने वाले राजपूतों की नसों में बिजली की एक लहर फैल गयी । राजपूतों ने एक स्थान पर एकत्रित होकर प्रतिज्ञा की—बन्धुओ ! मेवाड़ की प्यारी स्वाधीनता आज विजातियों से रौंदी जा रही है । यह सत्य है कि मेवाड़ के वर्त्तमान राणा ने अपने व्यवहारों से प्रत्येक मनुष्य के हृदय में अपमान की भयानक आग लगा रक्खी है पर यह चित्तौड़ के राणा का प्रश्न नहीं है, यह प्रश्न है प्यारे मेवाड़ की स्वाधीनता का ! जिस स्वाधीनता की वेदी पर, हमारे पूर्वजों ने हँसते और मुसुकराते हुये अपनी बलि चढ़ा दी है, वही स्वाधीनता उन्हीं की सन्तानों की नसों में रक्त रहते हुये पराधीनता के रूप में कैसे बदल सकती है ! प्यारे भाइयो ,उठो, अपमान और मान की बातों को छोड़ कर एक बार फिर चित्तौड़ के घर घर में स्वाधीनता का अलख जगा दो, जिससे बच्चे बच्चे तक मैदान में निकल

कर, चित्तौड़ी माता के चरणों पर अपना शीश चढ़ा सकें—अपने को उस पर अर्पण कर सकें।

देश की आन पर मरना जानते हैं तो राजपूत ! देश की शान पर प्राणों की बाज़ी लगाना जानते हैं तो राजपूत, और देश की प्यारी स्वाधीनता के लिये अपना सर्वस्व लुटाना जानते हैं तो राजपूत !! केवल प्रतिज्ञा की देर थी ! स्वाधीनता का नशा आँखों में दौड़ने भर का शेष था ! देखते देखते पागल सैनिकों की एक विशाल टोली, राणा विक्रमाजीत के झण्डे के नीचे एकत्र हो गई। राणा की उदासीनता कुछ कम हुई। राणा ने सब के सामने अपना हार्दिक पश्चात्ताप प्रगट करते हुये कहा :—वीर सर्दारों ! तुमने अपने अपमान की बात को भुलाकर प्यारे मेवाड़ की स्वाधीनता के लिये, जिस प्रकार त्याग और बलिदान को स्वीकार किया है, उसे देखकर चित्तौड़ भूमि यदि आनन्द से पुलकित हो गयी हो तो आश्चर्य क्या ? पर·········!"

"पर"—क्यों महाराणा इस बलिदान के समय जबान पर यह पर लाना कैसा ! आपका 'पर' हृदय में सन्देह की सृष्टि करता है ! क्या आपको विश्वास नहीं कि राजपूतों की यह पागल टोली, मेवाड़ की स्वाधीनता के लिये बलि वेदी पर अपनी भेंट चढ़ा सकेगी, एक सैनिक ने आवेश के साथ कहा।

राणा ने उत्तर दिया—नहीं, यह बात नहीं वीरों ! भला तुम्हारी वीरता में किस को संदेह होगा ! गंगा के पवित्र पानी की भाँति झलकती तुम्हारी देश-भक्ति के प्रति किसके मन में सन्देह

का भाव उत्पन्न होगा ! पर प्रथम युद्ध में जिस कारण बहादुर की सेना के समक्ष राजपूतों की हार हुई, वह कारण तो अब भी उपस्थित है। तुम्हें मालूम नहीं सर्दारों ! बहादुर की सेना में लाब्रि नामक एक ऐसा मनुष्य है। बहादुर ने जिसकी सहायता से अनेकों प्रकार के अग्नि-अस्त्र तैयार करवाये हैं। जिस समय वह अपनी सुरंग में छिप कर गोला छोड़ने लगता है, उस समय बड़े बड़े वीर सर्दारों के प्राण भी सूख जाते हैं।"

राजपूत सर्दार कुछ देर के लिये मौन हो गये ! सैनिकों का मौन देखकर सत्तू और दूदू नामक दो वीर सर्दार अपनी टोली लेकर बाहर निकल कर खड़े हो गये। इन दोनों बहादुरों ने गर्ज कर कहा—महाराज ! चिन्ता नहीं, मेवाड़ की पवित्र धूलि में सना हुआ यह शरीर, जबतक इस रूप में है, तब तक उस धूलि का एक कण भी कोई अपने हाथ में नहीं उठा सकता ! आप मेरी इस टोली को, उस अग्नि-मुख के सामने नियत कर सुख से संग्राम में तलवार चलायें या तो हम स्वयं उसकी भेंट चढ़ जायँगे या उसके हाथों को बन्द कर चित्तौड़ी माता का जयजयकार करेंगे।

जयजयकार से आकाश गूँज उठा। वीर राजपूत चित्तौड़ के पवित्र रज को मस्तक पर लगा कर रणस्थल में डट गये। तुमुल युद्ध होने लगा। सत्तू और दूदू की वीरता देखने योग्य थी ! अग्नि उगलनेवाले गोलों के बीच से शत्रुओं पर आक्रमण करना, साधारण मनुष्यों के शक्ति की बात नहीं। उधर अन्य

राजपूत सैनिक भी, अपनी तलवारों और पट्टों के विकट आघातों से शत्रु सेना का विध्वंस कर रहे थे। सत्तू की छोटी सी टोली, कबतक उस मोर्चे को सम्हाल सकती थी! एक एक करके सभी राजपूत अग्नि के मुख में चले गये। सत्तू और दूदू ने भी, हँसते हुये, मातृभूमि की वेदी पर अपना शीस चढ़ा दिया। गोला अब सीधा आकर राजपूतों की सेना पर गिरने लगा। पर अपनी प्यारी मातृभूमि की स्वाधीनता की ममता में उन्हें अपने प्राणों की परवाह न थी। वे मरते थे और मरने के लिये आगे बढ़ते जाते थे। बहादुर राजपूतों की इस बहादुरी को देख कर परेशान था, हैरान था। पर उसकी सेना राजपूतों का विध्वंस कर चित्तौड़ की ओर आगे बढ़ती ही जा रही थी।

(४)

सभी सैनिक मारे गये। बहादुर चित्तौड़ के दुर्ग पर अधिकार जमाना चाहता है। केवल थोड़े से राजपूत सैनिक उसकी गति को रोक कर मार्ग में तलवार चला रहे हैं, पर वे कब तक रोक सकेंगे। फिर चित्तौड़ के भावी राजकुमार प्यारे उदय की कैसे रक्षा की जाय! उस छोटी सी सभा में यही प्रश्न पेश था। उसमें स्त्रियाँ भी थीं पुरुष भी। उसमें सिंह भी थे, सिंहनियाँ भी। सब शान्त थे। इसी समय एक कोने से एक युवती, आँखों में चिनगारियां भर कर बोल उठी—जबतक राजपूत महिलाओं की नसों में राजपूती खून है तब तक बहादुर न तो उदय पर हाथ लगा सकता है और न चित्तौड़ के दुर्ग पर अपना अधिकार जमा

सकता है। हाँ उदय को यहां से किसी दूसरे स्थान में भेज देना ही अच्छा होगा। मैं इसी समय वीर वेश में युद्धस्थल में जा रही हूँ और जा रही हूँ इसलिये कि तब तक उदय को किसी सुरक्षित स्थान में भेज कर सब लोग मरने के लिये तैयार हो जायँ, तभी चित्तौड़ का कल्याण होगा तभी—प्यारे मेवाड़ की स्वाधीनता सुरक्षित रह सकेगी।

युवती घोड़े पर सजकर तैयार होगई। उसके हाथ की तलवार को देखकर आकाश भी काँप उठा। उसके पीछे सैकड़ों अस्त्र-शस्त्र धारी वीर पुरुषों का दल भी चित्तौड़ी माता से विदा मांगने के लिये तैयार हो गया। इसी समय पाँच वर्ष का छोटा बच्चा उदय युवती के घोड़े के सामने आकर खड़ा हो गया। उसने तुनकते हुये कहा—मौसी ! तुम तो मुझे बहुत प्यार करती हो फिर तुम मुझे दूसरे स्थान में भेजने की सलाह देकर कहां जा रही हो ?

युवती ने उत्तर दिया—बेटा ! तुम्हारे उसी प्यार की रक्षा करने, चित्तौड़ का ऋण चुकाने। जाओ तुम इन सर्दारों के साथ, जहां ये ले जा रहे हैं जाओ।

उदय रोने लगा। उसने कहा—मौसी ! मैं भी संग्राम में तुम्हारे साथ मरने के लिये चलूँगा। चित्तौड़ का ऋण चुकाऊँगा।

युवती की आंखों में आँसू भर आये। उसने चित्तौड़ी माता को प्रेम से मन ही मन प्रणाम कर कहा—बेटा ! चित्तौड़ के लाल ! मेवाड़ की आशा ! तुम्हारे मुख से निकली हुई इन बातों को

सुनकर मेरी छाती फूल उठी। चित्तौड़ का मस्तक अभिमान से ऊपर उठ गया। पर बेटा, अभी तुम्हारा ऋण चुकाने का समय नहीं आया है। बेटा! अभी तुम इनके साथ जाओ।

युवती ने घोड़े की बाग ढीली कर दी। घोड़ा मैदान की ओर चल पड़ा। उधर उदय की माता कर्णावती ने उदय को प्यार कर उसे विदा किया। राजपूत सर्दार उसे लेकर बूँदी की ओर चले और उधर युवती ने संग्राम में पहुँच कर प्रलय मचा दिया। थोड़ी देर के लिये बहादुर की सेना में एक तूफान सा आगया। सैकड़ों यवन सिपाही उसकी भयंकर तलवार की मार से धराशायी हो गये। पर कई सहस्र मनुष्यों के सम्मिलित आक्रमण से वह कब तक अपने को बचा सकती थी! अन्य वीर राजपूत सर्दारों की भाँति ही उसका भी शरीर पृथ्वी पर गिर कर चित्तौड़ के कणों में समा गया! इधर युवती जहरबाई ने रणस्थल में गिर कर अपने कर्त्तव्यों का मोल चुकाया और उधर महारानी कर्णावती कई सहस्र क्षत्राणियों के साथ चिता में जलकर मर गईं! जिस समय बहादुर शाह ने चित्तौड़ में प्रवेश किया उस समय दुर्ग के फाटक खुले थे। स्थान स्थान पर कटे हुये हाथ पैर और सिर पड़े हुये थे। चारों ओर से साँय साँय और भाँय भाँय की आवाज आ रही थी। सारी चित्तौड़ नगरी श्मशान की वेदी पर बैठी हुई सी ज्ञात हो रही थी! बहादुर इस उत्सर्ग को देख काँप उठा।

स्नेह की गङ्गा

स्वाधीनता का नशा आंखों में भरकर प्रताप ने सैनिकों को आदेश दिया— नगर को उजाड़ दो। शस्य-श्यामला भूमि को विध्वंस कर दो। प्रासादों को ढहा कर खँडहर बना दो और नगरनिवासियों से कहो कि वे अपने हृदय से मोह और ममता को निकाल कर मेरे पार्वतीय प्रदेश में चलकर आश्रय लें।

आज्ञा में बल था, आदेश में शक्ति थी। राज्य-सम्बल न होने पर भी मुख पर वह साहस और आंखों में वह तेज था जिसे देख कर लोग यह सहज ही जान लेते थे कि मेवाड़ के समस्त बलिदानों का पुण्य आज इन्हीं आंखों में बस रहा है। किसी ने सिर तक न उठाया। सारा मेवाड़ उजड़ गया। कुछ देर पहले जो स्थान संगीत, आमोद, वाद्य यन्त्रों की मनोहारी ध्वनि और जन कोलाहल के द्वारा जीवन-संसार सा प्रतीत होता था वही निष्प्रभ नीरव और नितान्त दयनीय हो गया। जहां के भूमि खण्ड सुन्दर श्यामल शस्यों से सुरंजित दिखाई देते थे, वहाँ अब वनलताओं और लम्बे लम्बे तृणों ने अपना अधिकार जमा लिया। जिन राजमार्गों पर निरन्तर गर्वित मनुष्यों की टोली चला करती थी, वे जंगल की कांटेदार लताओं से घिर गये। बड़े बड़े प्रासाद गिर कर अपशकुनकारी पक्षियों के निवास बन गये। जिसी ओर देखिये उसी ओर अन्धकार।

पर क्या इस अन्धकार में भी मेवाड़ की स्वाधीनता हँस खेल नहीं रही थी।

प्रताप मेवाड़ को उजाड़ कर उसके सूने प्रान्त में प्रतिदिन घूमा करते। चित्तौड़ के टूटे हुये प्रासादों के पास जाकर उनसे पूछा करते—राजपूतों के प्यारे महल! बताओ तुम्हारी मिट्टी स्वतंत्र तो है! इस पर किसी ने हाथ तो नहीं लगाया है! तुम उजड़े रहो, मिटे रहो, बर्बाद होकर रहो, पर रहो स्वाधीन होकर! प्रताप तुम्हारे इस स्वरूप को भी अपने सर आँखों पर चढ़ाता है।

एक दिन इसी विजन प्रान्त में घूमते हुये प्रताप ने अपने सर्दारों से कहा—मेरे प्यारे सर्दारो! तुम देख रहे हो कि इस समय सारा भारत अकबर के चरणों पर लोट रहा है। अकबर ने अपने मायावी शिकंजों को चारों ओर फैलाकर तमाम भारत को उसमें फांस सा लिया है। बड़े बड़े क्षत्रिय राजपूत अपनी मान-मर्यादा को ठुकरा कर उसके हाथों के खिलौने बन रहे हैं। मैं जिस ओर अपनी दृष्टि डालता हूँ उसी ओर मुझे अकबर गुप्त रूप से लूटते खसोटते हुये दृष्टि गोचर होता है। पर क्या वह मेरे प्यारे मेवाड़ को लूट सकेगा? मेरे चित्तौड़ को बर्बाद कर उस पर अपना राजकीय अधिकार जमा सकेगा? नहीं, हरगिज नहीं! मैं कायर नहीं, योद्धा हूँ। मेरी रगों में राजपूती रक्त दौड़ रहा है। मैं मर जाऊँगा, टुकड़े टुकड़े करके फेंक दिया जाऊँगा, पर मान की तरह मान न बेचूंगा। प्यारे चित्तौड़ की पवित्र भूमि को म्लेच्छों के पैरों से कलंकित न होने दूँगा! प्यारे

सर्दारो ! तुम उन राजपूतों से जो अकबर के विलास-भवन में बैठकर उसके हाथों से सुरा का पान कर रहे हैं, उनसे अपना सम्बन्ध तोड़ लो । उन्हें अपनी दृष्टि में उसी भांति अपवित्र समझो जिस तरह एक गिरे हुए मनुष्य को समझते हो। वे कायर हैं, तुम वीर हो। वे विलासी हैं, तुम फकीर हो ! वे स्वार्थी हैं तुम त्यागी हो ! वे चित्तौड़ के भक्षक हैं, तुम उसके रक्षक हो । तुम्हारा उनका सम्बन्ध कैसा ! मेरे लिये तो मेरा भाई शक्ति भी अपवित्र है, कायर है। मैं उसे हाथ से छूना तक पाप समझता हूँ। उसने अकबर की गुलामी को स्वीकार कर अपनी स्वर्ग सी पवित्र राजपूती को नष्ट कर दिया है।

प्रताप के इस आदेश का सैनिकों ने स्वागत किया। दूसरे दिन ज्यों ही सूर्य की किरणों ने अपनी मनोहर मुसुकुराहट का प्रकाश संसार के ऊपर फेंका त्योंही कमलमीर के स्त्री पुरुषों, बूढ़ों और बच्चों ने गम्भीर स्वर में प्रतिज्ञा की कि अकबर के हाथों में राजपूती गौरव बेचने वाले कायर क्षत्रियों के साथ किसी प्रकार का प्रेम सम्बन्ध न रखेंगे।

(२)

वह अकबर के हाथों का खिलौना था। अकबर अपनी चुहु-लबाजी में मस्त होकर उसकी कुंजी ऐंठ देता था। वह उछल कर, हँसकर और ताली बजा बजाकर कहने लगता—मेरे प्यारे शाह ! प्रताप का उठा हुआ मस्तक धूल में मिलाओ। सारे मेवाड़ का विध्वंस कर उसे अपने इन मुबारक क़दमों के नीचे लुटाओ।

अकबर उस खिलौने की इस चुलबुलाहट से मुसकुरा देता । वह मन ही मन सोचने लगता ! कितना नादान, कितना भोला और कितना अज्ञानी है ! जिसकी गोद में पलकर बड़ा हुआ उसी को बर्बाद करने की मुझे सलाह दे रहा है । मुझे उकसा रहा है । अकबर की इस रहस्यमयी मुसकुराहट का अर्थ वह खिलौना न लगा कर ,उछल पड़ता । सोचता—शाह मेरे इन विचारों का स्वागत कर रहे हैं ।

उसका नाम था मान । वह अकबर का राजा था । अकबर की आज्ञा मान शोलापुर पर;विजय प्राप्त करने के लिये गया था । शोलापुर पर विजय प्राप्त कर हृदय में असीम प्रसन्नता के भरे हुए भावों के साथ वह दिल्ली की ओर लौट रहा था । मार्ग में कमलमीर में उतर कर उसने प्रताप का आतिथ्य स्वीकार करना चाहा । प्रताप ने उसकी सेवा तथा उसके आदर-सत्कार का भार अपने लड़के अमरसिंह को सौंपा । अमरसिंह ने मान की सेवा सत्कार में कुछ उठा न रक्खा । पर जब भोजन का समय आया तो अपने को अकेले पाकर मान अमर से पूछने लगा—अमर ! राणा कहाँ हैं ? उन्हें बुलाओ । वे मेरे साथ भोजन करने के लिये क्यों नहीं आये ?

उनके सिर में दर्द है, अमर ने उत्तर दिया ।

मानसिंह चौके से उठकर खड़ा हो गया । उसने क्रोध के स्वर में कहा—मैं जानता हूँ अमर ! राणा के शिर में दर्द क्यों हो रहा है । इस दर्द का उपाय शीघ्र ही यह मान करेगा । मान

की बात समाप्त भी न होने पाई थी कि प्रताप बाहर निकल आये। उन्होंने आंखों में स्वाभिमान भर कर उसी स्वर में उत्तर दिया—हां, हां, जा कुलांगार! साथ में अपने फूफा अकबर को भी लेते आना।

मान चला गया। प्रताप ने उस भूमि को जहां मान बैठा था गंगाजी के पवित्र पानी से धुलवा कर सन्तोष की सांस ली।

(३)

दिल्ली का शाही दर्बार लगा था अकबर उदास बैठा था। वह रह रह कर सोच रहा था शोलापुर का अभी कुछ समाचार नहीं मिला, राजा मान अभी संग्राम स्थल से लौट कर नहीं आये। इसी समय दरबान ने आकर निवेदन किया—जहाँपनाह, राजा साहब शोलापुर पर फतहयाबी हासिल करके लौट रहे हैं। अकबर का चेहरा खिल उठा। उसके सूखे हुये अधरों पर मुसुकुराहट की लाली दौड़ पड़ी। वह उत्सुकता पूर्वक मान के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

मान ने दर्बार में पहुँच कर शाह को मस्तक झुकाया। शाह ने उसके चेहरे पर दृष्टि डाल कर आश्चर्य से कहा—राजा साहब! मैंने सुना है कि आपने शोलापुर युद्ध में बड़ी बहादुरी दिखा कर विजय प्राप्त की है, पर आपके चेहरे पर उस विजय की प्रसन्नता न होकर यह उदासी क्यों?

मान की आँखों में आँसू भर आये। उसने अपनी उन आँखों में सारी राजपूती शान डुबो कर उत्तर दिया—जहाँपनाह!

शोलापुर विजय की जितनी खुशी मेरे हृदय में है, उससे बढ़कर दुःख मेवाड़ के पागल सिंह प्रताप को देखकर है। जब तक उसका सर्वनाश न हो जायगा, जब तक मेवाड़ की भूमि श्मशान की भाँति उजाड़ न हो जायगी तब तक न तो मान के चेहरे पर प्रसन्नता आप को नजर आयेगी और न उसकी आँखों के ये चमकते हुये जल कण ही सूख सकेंगे।

मान ने अपने अपमान की बात अकबर के कानों में डाल दी। अकबर ने क्रोध से पागल होकर उत्तर दिया—राजा साहब! धैर्य धरो! प्रताप को मालूम नहीं कि अकबर मान को किन आँखों से देखता है। मान के लिये अकबर के हृदय में कितना स्नेह और सम्मान भरा हुआ है। राजा साहब! प्रताप ने आपका अपमान नहीं किया है, उसने दिल्ली के शाही दर्बार का अपमान किया है। उसने अपनी इस तुनुकमिजाजी से दिल्ली के शाहंशाह अकबर की मान-मर्यादा को धूल में मिलाने का साहस किया है। मैं आप को आज्ञा देता हूँ राजा साहब, आप सलीम के अधिनायकत्त्व में मुगलों की एक विशाल सेना लेकर मेवाड़ पर चढ़ाई करें और मेवाड़ की चप्पा चप्पा भूमि को खोद कर तहस नहस कर दें! पर इस आक्रमण के पहिले मैं यह अच्छा समझता हूँ कि मेवाड़ के पार्वतीय प्रदेश का रहस्य शक्त सिंह से जान लिया जाय! इस में सन्देह नहीं कि वह भोला भाला नवयुवक, मेरी बातों से प्रसन्न होकर प्रताप की सेना का सारा रहस्य मुझे बता देगा।

भाग भला उसे कब न मानता। अकबर ने दरवान से शक्त को दर्बार में बुला कर कहा—शक्त! जानते हो मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ—तुम्हारे लिये किस कदर मुसीबतों को उठाने के लिये तैयार रहता हूँ, तो क्या अवसर पड़ने पर तुम भी मेरी ही भाँति अपने कर्त्तव्य को पूरा कर सकोगे?

क्यों नहीं—शक्त ने उत्तर दिया—जहाँपनाह! राजपूत किसी को एक बार वचन देकर फिर उसके साथ विश्वासघात करना नहीं जानते! उनका सर, उसके लिये, सदैव उनके हथेली पर तैयार रहता है। फिर उन्हीं राजपूतों के वंश में उत्पन्न होकर, यह शक्त क्यों न अपने कर्त्तव्य को पालन कर सकेगा!

अच्छा यदि यह बात है—अकबर ने कहा—तो प्यारे शक्त! आज सचमुच वह समय आ गया है, आज देखना है कि तुम मेरे हृदय में पले हुये प्यार का मूल्य, कहाँ तक अपने कर्त्तव्य से चुकाते हो? तुम जानते हो कि मेवाड़ का पार्वतीय पथ अत्यन्त दुस्तर और दुर्गम है। प्रताप ने, बड़ी चतुराई से, इन्हीं पार्वतीय प्रदेशों में अपनी सैनिक-शक्ति का संगठन कर रक्खा है। तुम प्रताप के भाई हो, उसके साथ रहे हो, मेवाड़ के पार्वतीय प्रदेशों से परिचित हो, अतः कर्त्तव्य चुकाने के नाते प्रताप की सैनिक शक्ति का सारा रहस्य बता कर अपने सम्राट के दग्ध हृदय को शीतल करो।

युवक चुप हो गया। उसकी राजपूती आत्मा काँप उठी। उसने अपने मन में कहा—नहीं, यह कभी नहीं हो सकता। भाई!

मेरा भाई प्रताप !! चित्तौड़! मेरा प्यारा चित्तौड़ !! ओह ! मैं क्या सुन रहा हूँ। हरगिज नहीं, सम्राट, तुम एक सच्चे राजपूत से इसकी आशा न करो ! राजपूत अपने भाई के दुश्मन बन कर भी अपने देश की गर्दन पर छुरी नहीं चलाते। शक्त को चुप देख कर अकबर ने कहा—क्यों ! शक्त चुप क्यों हो बोलो।

शक्त ने उत्तर दिया—जहाँपनाह मैं अवश्य आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। आप सेनापति सलीम के साथ मुझे रण स्थल में भेज दें फिर देखें कि सच्चे राजपूत किस भाँति अपने वचन का निर्वाह करते हैं !

अकबर प्रसन्न हो उठा। उसने मुगलों की विशाल वाहिनी, सलीम और मान के हाथों में सौंपकर कहा—जाओ, मेवाड़ अपना सर्वनाश कराने के लिये तुम्हारा आवाहन कर रहा है।

(४)

उदयपुर के पश्चिम में दशयोजन विस्तीर्ण एक सम चतुष्को-ण विशाल प्रदेश दिखाई देता थे। अकबर के आक्रमण का समा-चार सुनकर वीर केसरी प्रताप ने इसी विशाल मैदान में अपना डेरा डाला। यह स्थान उदयपुर के पार्वतीय प्रदेशों का मध्य बिन्दु सा है। इसे चारों ओर से पर्वत-श्रेणियाँ घेरे हुई हैं। टेढ़ी मेढ़ी चाल वाली नदियाँ, इसके चारों ओर बह कर इसे अत्यन्त अभेद्य और सुरक्षित बनाये हुए हैं। जिसी ओर आँख उठाइये, उसी ओर लम्बा चौड़ा पर्वत अपने मस्तक को ऊपर कर आकाश से बातें करता हुआ नजर आता है।

इसी पार्वतीय प्रदेश के हल्दी घाटी नामक स्थानों में अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित होकर वीर राजपूत चारों ओर खड़े हो गये। महाबली भीलों का दल भी पर्वतों की उच्च श्रेणी पर बैठ, हाथ में धनुष बाण ले दुश्मनों की प्रतीक्षा करने लगा। इसका यह तात्पर्य था कि यदि मैदान में खड़ी हुई राजपूतों की सेना अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से दुश्मन को क्षत-विक्षत करेंगी, तो दूसरी ओर से भील सर्दार मुगलों पर पत्थरों की वर्षा करके उन्हें विचलित और स्तम्भित सा कर देंगे। प्रताप इस भांति अपनी सैनिक शक्ति को संगठित कर सलीम के आने की राह देखने लगे।

श्रवण का महीना था। रिमझिम पानी बरस रहा था। हरित तृणों से ढकी हुई पर्वत मालायें, प्रताप का यश-गीत गा रहीं थीं। उमड़ कर वेग से बहती हुई नदियां अपने 'हरहर' और 'कलकल' के निनाद से खड़े हुये राजपूतों को उत्सर्ग का पाठ सा पढ़ा रही थीं। देश भक्ति की गंगा में नहाने वाले प्रताप स्वाधीनता का प्याला पीकर हाथ में धनुष बाण ले घोड़े पर सवार हो सैनिकों में नवजीवन भर रहे थे। उनका त्यागी स्वरूप, उनकी आंखों में क्रीड़ा करती हुई बलिदान की भावनाएँ देखकर राजपूत और भील सर्दारों के मन में वीरता की एक अनुपम लहर सी दौड़ रही थी। इसी समय सलीम की सेना राजपूतों के सामने आ कर भिड़ गई। भयंकर युद्ध आरम्भ हो गया। एक ओर से 'हर हर महादेव' और दूसरी ओर से 'अल्ला हो अकबर' के गगन भेदी नारे लगने लगे। प्राणों की मोह-ममता छोड़कर राजपूत

आगे बढ़ने लगे। प्रताप का अनुपम उत्साह और रण-चातुर्य देख कर राजपूतों की नसों में स्वाधीनता का रक्त सा लहराने लगा। वीर रंग में रंगे हुए प्रताप जिस ओर अपने घोड़े की बाग फेरते उसी ओर मैदान खाली हो जाता, बर्छे और खड्ग के प्रहार से सैकड़ों यवन मुण्ड कट कट कर पृथ्वी पर नाचने लगते। जिस प्रकार प्रबल सिंह मृग के झुण्ड में घुस कर उसे क्षण-मात्र में विताड़ित कर देता है, उसी प्रकार चित्तौड़ी माता की रज को मस्तक पर लगाने वाले प्रतापी प्रताप ने थोड़ी ही देर में यवन सैनिकों को अस्त व्यस्त कर दिया। यवन सेना में हाहाकार मच गया। लोग इधर उधर भागने लगे। वीर प्रताप के बर्छे के सामने ठहरने की किसी की हिम्मत न पड़ी।

आंखों का नशा न उतरा। मान का अभिमान कलेजे में नेजे की भांति चोट कर रहा था। सारी मुगल सेना छिन्न भिन्न होगई पर मान सामने न आया। प्रताप चिन्तित हो उठे। उनका स्वाधीनता प्रेमी बर्छा मान का रुधिर पान करने के लिये अधिक बेचैन हो उठा। प्रताप उसकी खोज में अपने बर्छे की प्यास बुझाने के लिये मुगल सेना के व्यूह को चीर कर उसके भीतर घुस गये। ओह गजब की वीरता थी, सहस्रों मुगलों की तलवारें प्रताप के गर्दन पर गिरने के लिये एक साथ ही आकाश की ओर उठी हुई थीं और उसके उत्तर में प्रताप की केवल अकेली तलवार। पर थोड़ी ही देर में उस उन्मादिनी तलवार ने लपक कर, ललक कर सहस्रों मनुष्यों के हाथों को नीचे गिरा दिया! इसीसमय

अकबर का बेटा, सलीम हाथी पर सवार प्रताप के सामने आया। उसे सामने देखकर प्रताप की नसों में दूना रक्त दौड़ने लगा। प्रताप के घोड़े चेतक ने हाथी के मस्तक पर टाप जमा दी। प्रताप ने बर्छी फेंक कर उसके ऊपर प्रहार किया। बर्छी सलीम को न लगा। पर उसका हाथी और पीलवान इस संसार से चल बसा। सलीम को भयानक विपत्ति में पड़ा हुआ देखकर मुग़ल सेना चारों ओर से प्रताप पर टूट पड़ी। हाथी चिंघाड़ कर सलीम को घेरे से ले भागा एक साथ ही सैकड़ों वार होने लगे। प्रताप को मुग़ल सेना के व्यूह को भेद कर बाहर निकल जाना कुछ दुस्तर जान पड़ा।

वह एक दूसरी ओर लड़ रहा था। उसका नाम था झाला-पति माझा। उसने देखा मुग़लों के व्यूह में घिरे हुये प्रताप धीरे धीरे भयानक संकट में पड़ रहे हैं। उसने सोचा, प्रताप जीकर मेवाड़ को स्वाधीन करेंगे, चित्तौड़ी माता के पवित्र गौरव की रक्षा करेंगे और मैं कुछ नहीं। अतः मैं इस समय मर कर ही क्यों न अपने कर्त्तव्य को चुकाऊँ ? बस फिर क्या था, वह वीर अपनी एक छोटी टुकड़ी के साथ सिंह की भांति गर्जता, ठनकता, दुश्मनों को मूली की भांति काटता हुआ प्यारे प्रताप के पास जा पहुँचा और उनके सिर पर चमकते हुये राज छत्र को उतार कर उसे अपने सिर पर रखते हुये बोला—महाराज ! चित्तौड़ की अधि-ष्ठात्री देवी इस समय मेरा ही बलिदान चाहती है। आपको किसी दूसरे दिन के लिये वह सुरक्षित रखना चाहती है। अतः

अब आप यहां से फौरन चले जांय।

मुग़ल सैनिक अब माना को ही प्रताप समझ कर उस पर वार करने लगे। प्रताप को अवसर मिला, वे बाहर निकल गये।

(५)

युद्ध में विरत होकर एकान्त में वह युवक सोच रहा था—वह वीर है, मैं कायर हूँ। उसका मन गंगा जमुना की भाँति पवित्र है। उसने मातृभूमि की स्वाधीनता के लिये अपना सब कुछ तक उत्सर्ग कर दिया है। ओह! मैंने उसे नहीं पहचाना वह मेरा भाई प्रताप देश पर जी जान से मरनेवाला प्रताप पवित्रता से भी पवित्र है। शरीर में अनेकों आघातों के लगने पर भी वह किस भाँति रण-स्थल में अपना जौहर दिखा रहा है। जिस ओर झुकता उसी ओर मैदान साफ़ हो जाता। जिस ओर उसकी भयानक तलवार गिरती उसी ओर की पृथ्वी दहल जाती है। वह अभी तो अपने प्यारे चेतक पर सवार हो कर इसी ओर गया है। इसके पीछे दो कपट वेषधारी मुग़ल सैनिक भी तो लगे हैं। तो क्या ये कायर कुत्ते स्वाधीनता के उस अमरपुजारी, मेरे भाई प्रताप को मार डालेंगे? नहीं, शक्त जीता रहे और मेवाड़ के राणा पर कोई हाथ उठाये—चलो इन दोनों कुत्तों को मार कर फिर से देशभक्ति की गंगा में स्नान करें। तभी तो फिर चित्तौड़ का बन सकूंगा। तभी तो मेरे पापों का प्रायश्चित्त पूरा हो सकेगा।

युवक शक्त उछल कर घोड़े की पीठ पर जा बैठा और

घोड़े को एँड़ लगा कर उसी ओर द्रुतगति से चल पड़ा जिस ओर प्रताप जा रहे थे ! स्वाधीनता के पथ के उस थके हुए बटोही को लेकर ज्योंही चेटक ने उछल कर नदी पार की, त्योंही पीछे बन्दूक का शब्द हुआ। प्रताप चौंक उठे। इसी समय उनके कानों में यह शब्द पड़ा—हो नील घोड़ा असवार ! प्रताप के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उन्होंने पीछे फिर कर देखा—शक्त !

छिपी हुई प्रतिहिंसा जाग उठी। प्रताप ने म्यान से तलवार खींच कर कहा—शक्त ! सचमुच यह बदला चुकाने का अच्छा अवसर है ! मुझे मार कर मुगल सम्राट अकबर से पुरस्कार लेने का अच्छा मौका है। पर अभी प्रताप के हाथों में तलवार है। इस तलवार को हाथ में रहते हुये क्या कोई प्रताप को मार सकेगा ? नहीं, आओ मैं तलवार से तुम्हारा स्वागत करने के लिये तैयार हूँ।

शक्त ने प्रताप के चरणों पर गिर कर इसका उत्तर दिया।

कैसे विश्वास हो भाई शक्त ! प्रताप ने कहा।

शक्त ने अपनी तलवार निकाल कर अपनी गर्दन पर रख ली।

प्रताप का हृदय स्नेह से भर गया। उन्होंने शक्त को उठा कर अपनी छाती से लगा लिया और उसके मस्तक को चूमते हुये कहा—प्यारे भाई दुखी न हो, देश-भक्ति की गंगा सारे पापों को बहाकर दूर कर देती है।

तपस्वी

(१)

उदयपुर के विलास सामग्रियों से सजे हुये दर्बार में बैठकर अमरसिंह अपने विलासी सर्दारों से बातें कर रहे हैं। चेहरे पर वासना का भाव दौड़ रहा है। आंखों में मोहिनी मदिरा एक साथ ही अपनी खुमारी उँडेल कर राणा को निश्चिन्त सा बना रही है। राणा ने उसी खुमारी के एक हलके झोंके को खाकर कहा—गायक ! कोई गान सुनाओ। आज्ञा की देर थी, सुमधुर लहरी का श्रोत उमड़ पड़ा। वाद्ययन्त्रों की मीठी स्वर-धारा बह चली। गायक ने सावधानी से स्वर में स्वर मिला कर राग छेड़ दिया :—

जीवन में आती जाती हो।
स्वाद भरी लगलग ओठों से आंखों में छाती जाती हो।
एक नहीं सौ सौ रागों को बरसाती गाती जाती हो।
मधुर कामनाओं की लहरें गति से लहराती जाती हो।
लहरों में उछली बूंदों से जग को नहलाती जाती हो।

खूब ! बड़ा ही सुन्दर गान है गायक ! तुम्हारी मधुर स्वर-लहरी से छिटक कर सचमुच उसने मेरे हृदय को नहला दिया, सचमुच उसने मेरी आँखों में एक अद्भुत भावना भर दी। मेरा तड़पता हुआ दिल तुम्हारे इस गान के ही कारण कुछ देर

तक मीठी निद्रा में सो चुका। लो, यह पाँच सौ मुद्रा पुरस्कार।

गायक खुश होकर चला गया। अमर का हृदय फिर चिन्ता से दग्ध होने लगा। उन्होंने अपने सर्दारों से कहा—सर्दारो! तुम लोगों ने सुना है कि दिल्ली सम्राट जहाँगीर ने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी है। वह अपनी विशाल सेना लेकर मेरी ओर चल पड़ा है। ओह् मैं क्या करूँ? मेरे पास शक्ति नहीं, सम्बल नहीं! मैं कैसे उसके सामने जंगली इच्छा से जाने का साहस करूँ! और फिर अशान्ति को तो मैं बुरी वस्तु समझता हूँ। मेरी इच्छा नहीं कि, मैं संग्राम की इच्छा से जहाँगीर के सामने जाकर अपने सुखी जीवन में बाधा उपस्थित करूँ। सर्दारो! तुम्हारी क्या सम्मति है!

एक सरदार ने उठकर निवेदन किया—महाराज! सचमुच जंग बड़ी बुरी चीज है। देखिये इसी जंग के चपेट में पड़ने के कारण मेवाड़ श्मशान की भाँति उजाड़ हो गया। सहस्रों स्त्रियाँ विधवा और पुत्रहीन हो गईं। यदि महाराणा प्रताप अकबर से सन्धि कर लिये होते तो आज आपके सामने इस भय का प्रश्न ही न उठता! अतः महाराज, मैं आपसे निवेदन करूँगा कि आप संग्राम के फेर में न पड़कर जहाँगीर से सुलह कर लें। आपकी की हुई यह सुलह, मेवाड़ के लिये बहुत ही सुखकर और सुन्दर सिद्ध होगी।

एक दूसरे सरदार ने कहा—ठीक है महाराज! जहाँगीर दिल्ली का सम्राट है। उसके चरणों के नीचे इस समय सारा

भारत लोट रहा है। बड़े बड़े क्षत्रिय राजा उसके सामने केवल अपना मस्तक झुका देने ही के कारण सुख की जिन्दगी व्यतीत कर रहे हैं फिर आपही क्यों इस प्रकार चिन्ता की भयंकर अग्नि में अपने को जलायें बर्बाद करें।

अमर की आँखों में नश्वर जीवन के साथ ही विलास का गहरा भाव दौड़ रहा था। वे मन में सोचने लगे—सचमुच इस तीन दिवस की जिन्दगी में रक्खा ही क्या है! जब तक जीऊँ, आराम कर लूँ, मरने पर तो संसार की ये अमूल्य वस्तुयें स्वप्न सी हो ही जायँगी।

अभी अमर यह सोच ही रहे थे, इसी समय चन्द्रावत कृष्ण की गम्भीर आवाज़ ने अमर की विचार-मुद्रा भंग कर दी। चन्द्रावत कृष्ण ने गर्ज कर कहा—मेवाड़, प्यारा मेवाड़, विपत्ति की ज्वाला में जले और प्रताप का ज्येष्ठ पुत्र निश्चिन्त होकर बैठा रहे, आश्चर्य है! आश्चर्य ही नहीं, अमर! तुम्हारे इस कायर-जीवन पर तुम्हें धिक्कार है। देखो, आकाश की ओर मस्तक उठा कर देखो! मेवाड़ का अमर पुजारी प्रताप आँखों में आँसू भर कर तुम्हारी ओर देख रहा है! उसकी वर्षों की संचित की हुई स्वाधीनता की निधि तुम्हारे ही कारण लुटी जा रही है, बर्बाद हो रही है! जानते हो अमर यह निधि उसने कैसे खरीदी थी? जंगलों में रह कर, घास की रोटियाँ खाकर, दूर-दूर भटक कर, शरीर का रक्त बहाकर और प्राणों की बाजी लगा कर! पर हाय! उसी को तुम आज बेमोह रौंदे डाल रहे हो, कुचले जारहे हो!

कृष्ण की इस ओजस्विनी वाणी से अमर का हृदय काँप उठा। आँखों से चिनगारियाँ सी बरसने लगीं। चेहरा अपमान का अनुभव कर तमतमा उठा और मुँह खोलकर कुछ विष उगलना ही चाहता था कि कृष्ण जी के वीर हृदय में स्वाधीनता-अग्नि की एक भयानक लहर दौड़ उठी। उन्होंने क्रोध के आवेश में एक कोने से, एक पत्थर का टुकड़ा उठाया और जोर से दर्बार गृह में लगे हुये लम्बे चौड़े आइने के ऊपर फेंक दिया। आइना चूर चूर हो गया, दर्बार में सन्नाटा छा गया ! अमर कायरों की भाँति अपने सिंहासन से उस वीर केसरी की ओर देखने लगे ! उसने आगे बढ़कर अमर का हाथ पकड़ लिया और उन्हें सिंहासन से नीचे खींचते हुए कहा—प्रताप का पुत्र, मेवाड़ के विपत्तिकाल में सुख की नींद सोवे, यह हो नहीं सकता ! कृष्ण जी की रगों में खून और मस्तिष्क में चेतनाशक्ति रहते हुये, प्यारे प्रताप के विमलवंश के मस्तक पर कलंक का टीका लगे यह असम्भव सा है। प्रतापी प्रताप के ज्येष्ठ पुत्र अमर युद्धवेश में तैयार होकर चलो ! देखो, मैदान में खड़े हुये वीर सैनिक तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

(२)

निशा के अर्द्ध समय में अमर जग पड़े। उन्होंने अपनी आँखों को मींज कर देखा—चाँदनी छिटकी है। अगल बगल शिविर ही शिविर दिखाई दे रहे हैं। शिविरों में राजपूत सैनिक निश्चिंत होकर सो रहे हैं। किसी के सांस लेने तक की भी आवाज

नहीं आरही है। केवल पहरुये थोड़ी-थोड़ी देर पर बातचीत करते तथा हाँक लगाते हुये पाये जा रहे हैं! नहीं तो सभी शांत हैं, सभी सुख की मीठी निद्रा में आनन्द कर रहे हैं! अद्भुत दृश्य है, विचित्र त्याग है! ये जानते हैं, कल प्रातःकाल या दो-तीन दिन के बाद ही भीषण जंग आरम्भ होगा! तलवारें चलेंगी, गोलियाँ बरसेंगी, तोपें गरजेंगी, सहस्रों मनुष्यों का रक्तपात होगा! पर फिर भी ये सुख की नींद सो रहे हैं! ऐसा ज्ञात हो रहा है मानों इन्हें कोई चिन्ता ही नहीं, मानों इनके हृदय में अपने बाल-बच्चों की कुछ ममता ही नहीं! पर यह क्यों किसलिये! इसीलिये न कि ये अपने प्यारे मेवाड़ को प्रलयकाल तक स्वाधीन देखना चाहते हैं। उसकी स्वाधीनता की ममता, इन्हें अत्यंत अमूल्य है। ये उसकेलिये अपने स्त्री-पुत्र को छोड़ रहे हैं, अपने प्राणों की बाजी लगा रहे हैं। पर मैं ओह कितना भूला हुआ था मैं कहां से कहाँ चला गया था! किन्तु वाहरे कृष्णा जी तुम्हारी वाणी में भी तो अमोघ शक्ति छिपी हुई है। मैं पापपंक में लिपटा हुआ दोनों हाथों से अपने प्यारे मेवाड़ के अमर-वैभव को लुटाने के लिये तैयार था पर तुम और तुम्हारी वाणी ने अपनी थोड़ी शक्ति ही से मुझे खींच कर बाहर निकाल लिया। प्यारे कृष्णा, इस महान् पुण्य के बदले तुम्हारा नाम यदि चित्तौड़ के प्रत्येक रजकणों पर लिखा रहे तो आश्चर्य नहीं।

अमर सोचते-सोचते निद्रित हो गये स्वाधीनता देवी ने गुप्त रूप से आकर उनकी आँखों में अपनी गहरी मादकता उँडेल दी। वे उसी में सो गये तन्मय हो गये। सबेरे ज्योंही सूर्य की किरणों

ने संसार के हृदय को गुदगुदाया और वह खिल कर हँसने लगा त्योंही अमर उठकर कृष्णाजी के शिविर में जा पहुंचे।

अमर को अपने शिविर में देखकर कृष्णाजी के आश्चर्य की सीमा न रही। अमर ने कृष्णाजी को बोलने का अवसर न देकर कहा—कृष्णाजी! मुझे यहाँ देखकर आप आश्चर्य में क्यों पड़ रहे हैं! क्या कहीं त्यागी वीर की ओजस्विनी वाणी भी प्रभाव से खाली जा सकती है। सचमुच कृष्णाजी मैं भूला हुआ था। भटका हुआ था। ओह! क्या मेरे इस पाप का भी प्रायश्चित्त हो सकेगा? नहीं कृष्णाजी, आपने मुझे महापतन के सागर में गिरने से रोक लिया। आप मेरे पिता हैं, भाई हैं, सर्वस्व हैं।

कृष्णाजी हँस पड़े, हृदय आनन्द से गद्गद् होगया। उन्होंने प्रसन्नता का भाव दिखाते हुए कहा—अब मुझे दृढ़ विश्वास है कि राजपूतों की तलवार मुग़ल सेना पर विजय प्राप्त करेगी।

(३)

जहांगीर उदासभाव से बैठा हुआ सोच रहा था। रह रह कर उसके हृदय में अमर के वीरता की सराहना आ रही थी। वह मन ही मन कह रहा था। गजब का दिलेर है, उसमें गजब की बहादुरी है! मुगलों की विशाल वाहिनी को काटकर उसने किस खूबी के साथ अपनी मजबूत सत्ता स्थापित कर ली है। उसने सत्रह बार मुग़ल सेना को खाक में मिला दिया। क्या किया जाय? किस तरह उसे अपने पंजे में लाया जाय। दिल्ली के सम्राट के लिये तो यह बड़े अपमान की बात है कि एक छोटे

से प्रान्त का शासक उसे कर न दे, उसके हुक्मों को न माने।

जहाँगीर सोच रहा था। इसी समय वजीर ने पहुँच कर जहाँगीर को अभिवादन किया और उसके कुछ पूछने के पहिले ही स्वयं कहने लगा—जहांपनाह! अभी एक दूत खबर लेकर आया है कि अन्तला के दुर्ग पर राजपूतों का अधिकार होगया। वहाँ के समस्त दुर्गरक्षक मार डाले गये। राजपूतों का सर्दार चन्दा राजव की बहादुरी दिखाकर दुर्ग में घुस गया और अपने राजपूती पताके को बड़ी शान से दुर्ग के ऊपरी भाग पर फहरा दिया।

वजीर की बात सुन कर जहाँगीर की आँखों में क्रोध नाचने लगा। उसने भौहों को टेढ़ी करके कहा—वजीर! उस मौत के मुख में जाने वाले अमर की हरकत दिनोंदिन बढ़ती जा रही है, वह अधिकार और राज्य का लोभी बनकर दिनोंदिन अपने पैरों को आगे बढ़ाता जा रहा है! उसकी फतहयाबी ने इसमें शक नहीं कि उसके दिल में एक बाढ़ सी उत्पन्न कर दी है। इसी से शायद अब वह यह सोचने लगा है कि दिल्ली के दर्बार की सारी ताकत खत्म हो चली है! अच्छी बात है। मन्त्री! मुगल-सैनिकों की एक विशाल सेना तैयार कर खुर्रम के सेनापतित्व में शीघ्र ही मेवाड़ पर चढ़ाई करो।

(४)

मेवाड़ के टूटे खँडहरों पर स्वाधीनता का वाद्य बज उठा। संग्राम गीत गाए जाने लगे। अमर ने मेवाड़ के लाखों स्त्री-पुरुषों

के बीच में बोलते हुये कहा—प्यारे भाइयो ! जहांगीर से संग्राम करते करते मैं थक गया, परेशान हो गया ! एक नहीं सत्रहवार मेरे वीर सर्दारों ने मुगलों की सेना को काटकर गिरा दिया, परन्तु फिर भी जहांगीर पस्त होता हुआ नहीं दिखाई दे रहा है। सुना गया है कि मेवाड़ की स्वाधीनता को हड़पने के लिये मुगलों की एक भयंकर सेना फिर मेवाड़ की ओर चल पड़ी है। यह भी सुना गया है कि इस सेना का सेनापति जहांगीर का बेटा स्वयं खुर्रम है ! वह मेवाड़ को बिल्कुल बर्बाद कर देने के इरादे से आ रही है। तो क्या मेवाड़ बर्बाद हो जायगा ? वीरो ! हाथ में तलवार धारण कर मैदान में निकल पड़ो और दुश्मनों को बता दो कि मेवाड़ निवासियों को पराधीन करना सरल नहीं।

वक्तृता में अद्भुत जादू था। स्त्रियाँ हाथों में तलवारें लेकर निकल पड़ीं। पुरुष ताल ठोंक कर मैदान में आ गये। विचित्र दृश्य था ! स्त्री-पुरुषों की उस भोलीभाली सेना को, बलिवेदी पर बलिदान होने के लिये जाते हुये देखकर चित्तौड़ के खँडहरों की छाती गर्व से फूल उठी।

युद्ध आरम्भ होगया। मेवाड़ियों की आँखों में देशभक्ति का प्रबल उन्माद था ! वे प्रलय की भाँति विकराल रूप धारण कर मुगलों की वाहिनी को काट रहे थे, काल की भांति प्रचण्ड बनकर, उनका सत्यानाश कर रहे थे ! मरते जाते थे, पर आगे बढ़ते जाते थे ! अमर की वीरता भी सराहनीय थी। वह बूढ़ा सिंह घोड़े पर सवार होकर, झपट कर जिस ओर आक्रमण

करता, उस ओर का मैदान साफ़ हो जाता। सैकड़ों नरमुण्ड, एक क्षण में ही पृथ्वी पर कटे गिरे हुये दिखाई देते। क्यों न हो, प्रतापी प्रताप का ही तो रक्त था!

किन्तु अधिक देर तक नहीं। थोड़ी ही देर में सहस्रों मुगलों को भूमि पर लुटा कर मुट्ठी भर राजपूत भी मातृभूमि की भेंट चढ़ गये। मुगलों ने जयजयकार से आकाश को गुंजा दिया।

(५)

कितना चालाक है जहाँगीर—अमर चित्तौड़ की विध्वंस भूमि पर बैठे हुये सोच रहे थे—उसने किस कूटनीतिज्ञता से काम लिया। जब उसे यह मालूम हो गया कि राजपूतों पर विजय प्राप्त करना आसान नहीं, तो उसने किस भांति राजपूतों की सहानुभूति को अपनी ओर खींचने का प्रयास किया! संग्राम में खुर्रम के अधिनायकत्व में सेना भेजना यह क्या है? वह जानता था कि खुर्रम अम्बर राजकुमारी के गर्भ से उत्पन्न हुआ है। मुगल सेना में रहने वाले राजपूत, उसके संकेत मात्र पर ही प्राण देने को प्रतिक्षण तैयार रहते हैं! ओह कितना पाप है! कैसा विश्वासघात है! क्या इस पाप और विश्वासघात की भी कोई सीमा हो सकती है! उसके आदेश पर राजपूत सर्दारों ने तलवार उठाकर चित्तौड़ निवासियों के बाजू काट डाले।

इसी समय, एक प्रहरी राणा के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। उसने कहा—महाराज मुगल दर्बार से एक दूत आया है।

दूत आया है? राणा ने कहा—अच्छा जाओ, उसे अन्दर

ले आओ ! मालूम होता है मेवाड़ की स्वाधीनता को कुचल कर जहाँगीर, मुझे बूढ़े को अपने पींजड़े में बन्द करने के लिये बेचैन हो रहा है। पर यह कैसे हो सकता है ? जब तक शरीर में दो हाथ और हाथों की नलियों में रक्त का एक बूँद भी शेष है, तब तक प्रतापी प्रताप के इस बूढ़े बच्चे से यह कैसे हो सकता है ? आकाश काँप जाय, पृथ्वी दहल जाय, पर यह उठा हुआ मस्तक उस दर्बार के सामने कैसे झुक सकता है !

दूत ने, अमर को सिर झुका कर उनके हाथों में जहाँगीर का आदेश-पत्र दे दिया। उसमें लिखा था—यदि आप दिल्ली नगर में आकर सम्राट के सम्मान को स्वीकार करें तो मेवाड़ से यवनों की सेना हटा ली जाय।

नहीं, कदापि नहीं—अमर ने दूत को उत्तर दिया—भला यह कैसे हो सकता है कि प्रतापी प्रताप का पुत्र, जहाँगीर के कलंकित हाथों से उसका सम्मान स्वीकार करे ! दूत जाओ जाकर अपने शाह से कहो कि अमर का सम्मान चित्तौड़ के रज-कणों में हैं, यदि वे सुखी है तो अमर सुखी है।

दूत चला गया। अमर ने अपने लड़के कर्ण को बुलाकर कहा—वत्स आज से, यह मेवाड़ तुम्हारा और तुम मेवाड़ के। देखना, शरीर में रक्त का एक बूँद रहते हुये सीसौदिया वंश के मस्तक पर कलंक का टीका न लगने पावे। अब मैं यहाँ से नवौकि पर्वत पर जा रहा हूँ। अपने शेष जीवन को वहीं तपस्वी के रूप में बिता दूँगा।

अभिशाप

(१)

ओह ! रजनी के इस सूने संसार में सब सो रहे हैं। निद्रा की मादक तरंगों के साथ अठखेलियाँ कर रहे हैं ! पर मेरी आँखों में नींद नहीं, मन में सन्तोष नहीं, हृदय में सुख नहीं ! ऐसा मालूम हो रहा है मानों कोई भयंकर वेदना मानस को बेध रही है, मानों कोई अतृप्त भावना आँखों में दौड़ कर मुझे पागल बना रही है। हृदय ज्वाला से, मस्तिष्क चिन्ता से और शरीर एक अज्ञात पीड़ा से जला जा रहा है। इस सूने और अन्धकार-मय स्थान में भी, मानों कई मूर्त्तियाँ मेरी आँखों के सामने खड़ी होकर, दीवारों पर मेरे पतन का खाका खींच रही हैं ! सचमुच, मेरे बूढ़े पिता, भाई और बेटे की ही मूर्त्तियाँ हैं ! मैं इन निरपराधों के रुधिर से अपने हाथों को लाल कर कैसे सुख की नींद सो सकता हूँ। मुझे इस भयंकर पाप का प्रायश्चित्त करना ही होगा ! मेरी समझ में इसका प्रायश्चित्त यही हो सकता है कि मैं विधर्मियों को दण्ड दे, जाति की सेवा कर और मुग़ल साम्राज्य को पृथ्वी पर प्रबल बना कर, इनकी स्वर्गिक आत्माओं को प्रसन्न करूँ, सन्तुष्ट करूँ ! शायद इससे मेरा चित्त हलका हो जाय, मेरे मस्तिष्क की चिन्ता कुछ कम हो जाय।

दिल्ली सम्राट औरंगज़ेब, रह रह कर यही सोच रहा था।

वह कभी पलँग से उठकर दीवालों को टटोलने लगता, कभी उन्माद में बाहर निकल जाता और कभी कुछ देर के लिये ईश्वर प्रार्थना में तन्मय सा हो जाता, पर उसे शान्ति न मिलती। वह कहने लगता—मेरी आँखों में, सारा संसार एक दूसरे रूप में समा रहा है। इस संसार के पर्दे पर कितनी भयानक तस्वीरें खिची हुई हैं। कोई रोती है, कोई हँसती हैं! कोई काली है, कोई गोरी है! सबकी सब, एक साथ ही विचित्र आकृति बना कर मेरी ही ओर तो दौड़ी आ रही हैं।

औरंगजेब इसी प्रकार चिन्ता आवेश में बड़बड़ा रहा था। इसी समय उसे किसी ने पुकारा—'जहाँपनाह'—औरंगजेब चौंक उठा। उसकी सारी व्याकुलता थोड़ी देर के लिये हवा में मिल गई! उसने पीछे फिर कर प्रकाश को जगाकर देखा—उदय-पुरी बेगम खड़ी है। औरंगजेब के सूखे अधरों पर एक हल्की सी मुसुकराहट दौड़ पड़ी। उसने अपनी हृदय की वेदना को एक कोने में छिपा कर कहा—सचमुच तुम मेरे दिल की सजीव तस्वीर हो! इसीलिये तो मेरी बेचैनी को जानकर, इस समय इस अँधेरी रात में मेरे कमरे में आई! आओ, मेरे दग्ध हृदय को शीतल करो, मेरे तड़पते हुये दिल को शान्ति दो।

मैं तो आपकी कनीज हूँ जहाँपनाह!—उदयपुरी बेगम ने उत्तर दिया—आप मुझे बुलायें, या न बुलायें, पर आपके प्रेम-तार में बँधे हुये मेरे प्राण तो प्रतिक्षण आपके दिल की गति जानते रहते हैं! पर आज आप इतने बेचैन क्यों हो रहे हैं? रूप नगर

के राजा की एक लड़की है, उसका नाम है प्रभावती! जहाँपनाह! मैंने यह भी सुना है कि उसने अपने रूपराशि के अभिमान में आपका अपमान किया है। मेरी आरजू है सरकार कि वह अवश्य शाही महल में लाई जाय।

औरंगजेब ने कहा— कोई बड़ी बात नहीं, जेबुन्निसा ने भी कल उसकी चर्चा मुझसे की थी। मैं सोच ही रहा था कि तुमने भी उसमें जोर डाल दिया। कल प्रात:काल ही रूपनगर के नृपति के पास इस आशय का सन्देश भेज दिया जायगा। कहो अब तो तुम्हें सन्तोष है!

(२)

रूपनगर की सीमा पर शाही सेना के खीमे गड़ गये। मुग़ल दूत ने नृपति के दर्बार में जाकर औरंगजेब का सन्देश सुनाया। राजा सन्न हो गया। क्षत्रिय सर्दार काँप उठे। रूपनगर में उदासी छा गई। सब सोचने लगे क्या किया जाय?

राजकुमारी प्रभावती चिन्तित हो उठी। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। उसने अपने पिता के पास जाकर निवे-दन किया—पिता जी! शीघ्र ही उस नर-राक्षस के भयंकर पंजे से मुझे छुड़ाने के लिये कोई युक्ति सोचिये! राजा चुप रहा प्रभावती सोचने लगी क्या आज क्षत्रिय वंश की मर्यादा कालिमा के आव-रण से ढँक जायगी? नहीं हरगिज नहीं! कोई मेरी सहायता न करे, मैं स्वयं अपनी सहायता कर लूँगी! राजपूती-रक्त रहते हुये यह कैसे सम्भव है कि यवन नरपति मेरे शरीर पर हाथ लगावे।

इसी गौरव के लिये तो पद्मिनी ने, अपने को अग्नि का भेंट कर दिया था, किरण ने लोलुप अकबर को छाती पर बैठकर उससे नवरोज का मेला बन्द करवाया था, फिर अग्नि और छुरी रहते हुये औरंगजेब कैसे मेरा स्पर्श कर सकता है । यदि राजपूतों में राजपूती रक्त नहीं रह गया है तो क्षत्राणियों में तो है ! पर मैंने यह क्या कह डाला ! ओह पाप किया ! सभी गीदड़ हो गये तो इससे क्या ? राजपूत जाति वीरों से कुछ विहीन तो हो नहीं गई । मेवाड़ के राणा राजसिंह अभी मौजूद हैं । फिर उन्हीं के पास सहायता के लिये क्यों न प्रार्थना भेजूँ ?

राजकुमारी प्रभावती ने अपने विश्वस्त अनुचर से राजसिंह के पास अपनी प्रार्थना भेज दी । औरंगजेब के क्रूर कर्मों से जलनेवाले राजसिंह एक अबला की पुकार को सुन कर कैसे शान्त रह सकते थे ? उन्होंने अपने वीर सैनिकों को एकत्रित करके कहा—प्यारे वीरो ! औरंगजेब सारे भारत को निगलने का प्रयत्न कर रहा है । जिसी ओर मैं देखता हूं उसी ओर से हाय हाय की त्रस्त आवाज आती हुई सुनाई देती है ! आज उसी औरंगजेब से सताई जाने वाली रूपनगर की राजकुमारी प्रभावती का पत्र मेरे पास आया है । प्रभावती अपने सतीत्व के लिये, अपने गौरव के लिये मुझसे सहायता की भीख माँग रही है । बोलो सर्दारो ! तुम्हारी क्या राय है ?

राजपूत सर्दारों ने इसका उत्तर तलवार उठाकर दिया । राणा का हृदय आनन्द से पुलकित हो उठा । वे अपने सर्दारों को लेकर

रूपनगर की ओर चल दिये। उधर यवन सैनिक प्रभावती का डोला लेकर दिल्ली की ओर लौट रहे थे। मार्ग में आरावली पर्वत की घाटियों में राजपूतों का दल यवन सेना पर टूट पड़ा। चारों ओर से अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा होने लगी! थोड़ी ही देर में उस वीर केसरी ने यवन सैनिकों को मूली की भाँति काटकर गिरा दिया। जो कुछ बचे उन्होंने भागकर अपने प्राणों की रक्षा की। आकाश राजसिंह के जयजयकार से गूँज उठा। राजसिंह का हृदय इस विजय से नहीं बल्कि इसलिये हर्ष का सागर बन गया कि उन्होंने सहायता माँगने वाली की पुकार पर अपने को सफल रूप से तैयार पाया।

(२)

दिल्ली के तख्त पर बैठा हुआ औरंगजेब क्रोध से काँप उठा। उसने आँखों में आग से भी गरम चिनगारियां उँडेल कर कहा। वजीर! इस पत्र को फाड़कर दूत को बन्दी कर लो और अभी मेरी छत्रछाया में रहनेवाले समस्त सेना और सेनापतियों के नाम आदेश-पत्र जारी करो कि वे जहां भी हों तुरन्त दिल्ली में आकर उपस्थित हों। पर इसके पहले उन मार्ग के काँटों को निकाल कर बाहर फेंकना होगा, जो घड़ी घड़ी क्षण क्षण मेरी बातों का विरोध किया करते हैं। वजीर! जानते हो वे काँटे कौन हैं? वही दोनों यशवन्त और जयसिंह। यशवन्त इस समय काबुल और जयसिंह दक्षिण में है। संभव है राजसिंह से जंग शुरू होने पर ये दोनों उससे मिल जायँ। इसलिये इन दोनों

का पहले ही अन्त कर देना अच्छा होगा। तुम दो चतुर दूतों को मेरे पास भेजकर सेनापतियों के नाम आदेश-पत्र जारी करो।

दूतों को भेज कर वजीर ने आदेश-पत्र जारी किया। कुछ ही दिनों के पश्चात् मुग़ल साम्राज्य की सारी सेना दिल्ली में एकत्र हो गई। राजकुमार अकबर को बंगाल से और कुमार आजिम को काबुल से आना पड़ा। दक्षिण में शिवाजी के साथ संग्राम करते हुये मुल्तान मौजम को भी युद्ध बन्द कर दिल्ली लौटना पड़ा। औरङ्गजेब ने अपनी एक विशाल सेना को आदेश देते हुए कहा—वीरो! मुगल साम्राज्य के सर्दारो! चलो, जिस भांति सिंह मृगियों के झुण्ड पर आक्रमण कर उन्हें क्षणमात्र में अपने काबू में कर लेता है उसी प्रकार तुम भी राजपूतों को रौंद कर खाक में मिला दो। उनकी सारी मान-मर्यादा को कुचल कर जहन्नुम में फेंक दो। उनके उठे हुये मस्तक को काटकर बेमोह समुन्दर की लहरों में फेंक दो। देखो बहिश्त से आवाज रही है तुम्हें शवाब होगा, पुण्य होगा।

औरंगजेब के इस आदेश को हृदय में रखकर मुगल सेना प्रलय की भांति गरज उठी। पर क्या उस गरज से मेवाड़ की भूमि कांप उठी थी? नहीं, वह तो प्रसन्न होकर अपने पुत्रों के मस्तक पर युद्ध का टीका काढ़ने में लगी थी।

(५)

कोई चिन्ता नहीं—राणा ने सेनापति से कहा—सेनापति! क्या तुम जानते नहीं कि जब अकबर राजपूतों और यवनों की

सम्मिलित शक्ति से मेवाड़ के गौरव को नहीं विनष्ट कर सका तो औरंगजेब की अकेली यवन सेना कैसे विनष्ट कर सकेगी! उसके अत्याचारों के कारण इस समय राजस्थान के सभी राजपूत तुम्हारे पक्ष में हैं। यदि वे पक्ष में न भी होते तो क्या मेवाड़ के राजपूतों की तलवार म्यान में सोई रहती! नहीं, वह उस समय भी आकाश में बिजली बन कर चमकती और इस समय भी चमकेगी! पर युद्ध करने के पहिले जो नीति प्रताप दादा ने अकबर के साथ वर्त्ती थी, वही नीति हमें भी औरंगजेब के साथ वर्त्तनी चाहिये। जाओ, नगरनिवासियों के नाम आदेश पत्र जारी करो। उन्हें आज्ञा दो कि वे अपने प्यारे मेवाड़ के लिये मेवाड़ को श्मशान बना दें। अपनी ऊँची अट्टालिकाओं को छोड़कर आरावली पर्वत की उपत्यका में जाकर बस रहें! ओह! प्यारे मेवाड़, तुम्हें स्वाधीनता की रक्षा के लिये कितनी बार उजड़ना पड़ा। बर्बाद होना पड़ा। पर तुम्हारी शान तो इसी में है कि तुम धूल में मिल कर भी स्वतन्त्र रहो।

आज्ञा की देर थी! स्वाधीनता के पुजारी नगर-निवासियों ने पलमात्र में सारे मेवाड़ को बिजन सा बना दिया और आरावली पर्वत की उपत्यका जनसमूह से भर सी गई। मुगलवाहिनी ने वहां पहुंच कर देखा तो दुर्ग के किवाड़े खुले थे। नगरी श्मशान सी मालूम हो रही थी। चारों ओर से साँय साँय और भाँय भाँय की आवाज आ रही थी। मुगलवाहिनी ने इस उजड़ी हुई चित्तौड़ी गद्दी को और अधिक विध्वंस कर उसकी छाती पर

अपना खीमा गाड़ दिया। मुग़ल सैनिक चारों ओर लूट मचाने लगे। आसपास बसे हुये नगरों को बर्बाद करने लगे। लोग इधर उधर भागने लगे। चारों ओर एक भीषण तूफ़ान सा आ गया। एक गहरा चीत्कार सुनाई देने लगा। राजसिंह की वीर आत्मा काँप उठी। उनकी आँखों से चिनगारियां निकलने लगीं। उन्होंने राजस्थान के वीरों के नाम एक पत्र जारी किया। स्वाधीनता और गौरव का युद्ध था। शान और मान की लड़ाई थी। समस्त राजपूतों ने, राजसिंह के पत्र का स्वागत किया। सब राजसिंह के झण्डे के नीचे एकत्रित हुये। वहां की पहाड़ी 'पलिप' और 'पलिन्द' जातियां भी हाथों में धनुष-बाण लेकर मैदान में डट गईं! बहादुर भीलों का दल भी झण्डे के नीचे आकर हुंकार मारने लगा। एक ओर से 'हर हर महादेव' की विकराल ध्वनि आने लगी तो दूसरी ओर से 'अल्ला हो अकबर' का महा निनाद आकाश को विकम्पित करने लगा।

(५)

भूखा प्यासा औरंगजेब! दोनारि ग्राम के मोर्चे से भागा हुआ घोड़े पर चला जा रहा है। ऊपर से सूरज अनल की धारा बरसा रहा है और नीचे से मारवाड़ की उत्तप्त भूमि घोड़े के टापों को झुलसा रही है। शरीर पसीना से लथ-पथ हो रहा है। ओंठ सूख गये है। आँखों में आकुलता दौड़ रही है! घोड़े की भी विचित्र दशा है! वह भी प्यासा है, व्याकुल है, बेचैन है! पर सम्राट को अपनी पीठ पर बैठा कर मेवाड़ की ओर चला जा

रहा है ! मार्ग में एक वृक्ष की शीतल छाया के नीचे बैठकर औरंगजेब सोचने लगा—ओह गजब हो गया ! मेरा इतना अपमान इतनी पराजय ! मुगलों की समस्त सेना काटी जा चुकी । राजपूतों ने अपनी विकराल तलवार से मेरी आशा की दुनिया खाक में मिला दी ! मैं सोचता था, अपने इस सेना के द्वारा सारे मेवाड़ को सदा के लिये सुला दूँगा, पस्त कर दूँगा ! राजपूतों की मान मर्यादा को खाक में मिलाकर सुख की नींद सोऊँगा ! इसीलिये, मैंने अपने साम्राज्य भर की सेना जुटा कर मेवाड़ पर आक्रमण किया, पर कुछ न हुआ । अकबर हार गया, आजम पराजित हो गया । और मैं स्वयं इस बुरी अवस्था में पड़ा हुआ हूँ । पर यह निराशा क्यों ? दिल्ली सम्राट औरंगजेब को तो यह निराशा अच्छी नहीं मालूम होती ! चलूँ एक बार फिर प्रयास करूँ ! एक भारी मुगल वाहिनी भेज कर राजसिंह को नीचा दिखाया जाय ।

औरंगजेब उछल कर घोड़े की पीठ पर जा बैठा । जिस समय उसने घोड़े को एड़ लगाई, उसी समय वहीं वृक्ष पर रहने वाले पक्षियों ने चहचहा कर कहा—औरंगजेब ! याद कर ! यह तेरे पापों का प्रायश्चित है । देख, तेरा बूढ़ा पिता अब भी तुझे अभिशाप दे रहा है ।

समाप्त

मुद्रक—[illegible] पाण्डेय, [illegible] ।